मुनि विनयकुमार 'भीम'

रात

और

दिन

मुनि श्री हजारीमल स्मृति प्रकाशन
ब्यावर (राज०)

☐ रात और दिन (उपन्यास)

☐ मुनि विनयकुमार 'भीम'

☐ प्रकाशक :
मुनि श्री हजारीमल स्मृति प्रकाशन
पीपलिया बाजार
ब्यावर (राजस्थान)

☐ अर्थ सौजन्य
श्री बादलचन्द जी चोरड़िया

☐ प्रथमावृत्ति :
वि० सं० २०४० चैत्र
महावीर जयन्ती

☐ मुद्रक :
श्रीचन्द सुराना के लिए
एन० के० प्रिन्टर्स, आगरा

मूल्य : पांच रुपया मात्र

शुभाशीर्वाद

सुख और दुःख जीवन के दो पहलू हैं। न सदा सुख रहता है और न सदा दुःख ही। जिस प्रकार प्रकाश के बाद अँधेरा तथा अँधेरे के बाद प्रकाश का प्रत्यावर्तन होता है, वही स्थिति सुख एवं दुःख के साथ है। दुर्बलचेता मानव दुःख के थपेड़ों से घबरा जाते हैं, हिम्मत हार देते है। किन्तु मनस्वी पुरुष ऐसा नहीं करते। वे धैर्य, साहस और उद्यम द्वारा विकास एवं उन्नयन की दिशा मे अपरिश्रान्ततया बढ़ते जाते हैं तथा अन्धकार की कालिमा को प्रकाश की द्युति मे बदल देते हैं। आयुष्मान् अन्तेवासी मुनि विनयकुमार 'भीम' की प्रस्तुत कृति 'रात और दिन' एक ऐसा ही उपन्यास है। एक रोचक कथानक के माध्यम से मुनि विनय ने इसी तथ्य को बड़े सुन्दर रूप में उजागर किया है। घटनाक्रम, निरूपणक्रम आकर्षक है। पाठक को उससे साहित्यिक रसानुभूति तो होती ही है, जीवन के शाश्वत सत्य भी उसके समक्ष उद्घाटित होते जाते हैं, जिससे जीवन-यात्रा मे उसे अभीप्सित सम्बल प्राप्त होता है। आशा है, पाठक इससे लाभान्वित होंगे।

मुनि विनय एक उत्साही युवा सन्त हैं। लिखने मे उन्हे अभिरुचि है। उनकी लेखनी उत्तरोत्तर अभिनव सामर्थ्य और अभिव्यंजना कौशल प्राप्त करती जाये, साहित्यिक कृतित्व अध्यात्म जीवन को परिपोषण प्रदान करे, यही मेरा शुभाशीर्वाद है।

दिनांक ३०-३-८३ —युवाचार्य मधुकर मुनि

सोजत रोड

(राजस्थान)

अपनी कलम : अपना विचार

☐ जैन दर्शन एक महान् दर्शन है। इ
दर्शन को समझना कोई बच्चो का खेल नही है
जैन दर्शन ने जीवन के प्रत्येक पहलू पर गह
चिन्तन किया है, खोज की है। जैन कथा साहि
में अनेकों प्राचीन कथाएँ भरी पड़ी है। साहि
में कथाओ का अपना गौरवपूर्ण स्थान है। क
के माध्यम से विषय की अभिव्यक्ति तथा पु
करने में सुगमता होती है। कथा कहने की य
रीति भी नई नही, अतीव पुरानी है। हमा
धर्मनायक तीर्थंकर आदि भी अपनी धर्म-दे
नाओं में प्रसंगोपात्त घटनाओं का वर्णन करते थे
उन्ही कथाओ को उपन्यास के रूप में सर
सरस, रोचक एवं शिक्षाप्रद वनाने का सारा श्रे
हमारे जैन श्रमणो को है। वर्तमान सन्दर्भ
प्राचीन जैन कथाओं को लेकर हिन्दी भाषा
अनेक मन को भाने वाले उपन्यास आये। इस
प्रमुख योगदान जैन सन्तो का है।

धार्मिक उपन्यास के पढ़ने से जीवन
सुसंस्कार आते है। इतिहास की भी जानका
मिलती है। श्रावक-श्राविकाएँ, युवा-युवतिय
वालक-वालिकाएँ—सभी लगन के साथ पढ

है। मैं इस लगन को अच्छी मानता हूँ। अच्छे संस्कार जीवन की नीव के पत्थर है। अच्छा साहित्य पढने से अच्छे संस्कार आते है। सस्कारों के द्वारा ही नई दिशा, नई उत्प्रेरणा प्राप्त होती है। कुछ समय पूर्व मैंने 'पत्थर भी रो पडे', 'कभी धूप, कभी छाँव' 'माटी बन गई सोना' तथा 'बदलती हवाएँ' नामक कृतियाँ पाठको के हाथो में दी। लोगो ने उन्हे बड़े चाव से पढा, इसका मुझे परम सन्तोष है। मेरा उत्साह बढ़ा। स्फूर्ति मिली। इसी उत्साह का संबल लिये मैं पाठको के समक्ष 'रात और दिन' नामक यह नया उपन्यास प्रस्तुत कर रहा हूँ।

प्रस्तुत उपन्यास का कथानक काफी पुराना है। इसकी कहानी सुन्दर है। साथ ही साथ हृदय को दहलाने वाली भी है। राजा वीरधवल की पटरानी पद्मावती थी। वीर-भान, उदयभान राजकुमार थे। आँखों के तारे थे। सभी के प्यारे थे। रानी अस्वस्थ हो गई, खाट पकड ली। राजा वीरधवल पास बैठे हुए थे। रानी की आँखों में आँसू आ गये। राजा ने रोने का कारण पूछा। रानी बोली—मेरे चले जाने के बाद राजकुमारो का क्या होगा? मुझे आशंका है कि आप दूसरा विवाह करेंगे। मेरे प्राणप्रिय पुत्रो की बुरी हालत होगी। रानी जोर-जोर से रोने लगी। राजा वीरधवल ने रानी का हाथ अपने हाथ में लेकर वचन दे दिया कि मैं दूसरा विवाह नही करूँगा। रानी को राजा के वचन पर विश्वास हो गया। उसने शान्ति के साथ सदा-सदा के लिए अपनी आँखें मूँद ली। प्राण-पखेरू उड गये, केवल शरीर का ढाँचा अवशेष रह गया। राजा

रोया, प्रजा भी रोई। राजकुमार तो फूट-फूटकर रो
लगे। सारी प्रजा में शोक की लहर दौड़ गई। कुछ सम
निकला, सब बातें भूल चुके।

रानी के बिना अन्तःपुर बे-सुहावना लगने लगा
लोगों ने राजा से कहा—अब आपको दूसरी शादी कर
होगी। क्योंकि महारानी के बिना नगर की, राज्य क
कुछ भी रौनक नहीं है। राजा वीरधवल बोला—मैं दूसर
शादी नहीं करूंगा। राजा से बहुत बार कहा गया। अन्त
तोगत्वा वह दूसरी शादी के लिए तैयार हो गया। शाद
हुई। मधुलता दूसरी रानी आई। वीरभान और उदयभा
दोनों ही राजकुमार बड़े अच्छे थे। माता को नमस्का
करने गये। रानी ने उनको देखा। देखते ही उसके मन क
भावना बदल गई। राजा वृद्ध हो चुके थे। रानी के मोह
पाश में बँध चुके थे। मधुलता ने राजकुमारों से प्रणय
याचना की। राजकुमारों ने कहा—आप हमारी माता है
हम आपसे ये पापपूर्ण शब्द भी सुनना नहीं चाहते। राज
कुमार बाहर निकल गये। अपनी बात फैल न जाए, ऐस
सोचकर रानी ने राजकुमारों पर कलंक लगा दिया। वह
चिल्लाने लगी—ये राजकुमार मेरा शील-धर्म खंडित
करना चाहते थे। लोग इकट्ठे हो गये। ये शब्द राजा के
भी कानों में पड़े। राजा ने बिना सोचे-समझे उनके लिए
देश-निर्वासन की घोषणा कर दी। रानी को अब भी भय
था कि कहीं अन्यत्र उसकी बदनामी न हो जाए। रानी ने
राजा से कहा—इन पापियों के सिर काटकर मुझे लाकर
दें। राजा क्रोध में पागल था। अपने मंत्री सुमतिचन्द्र को

बुलाकर कहा—मैं इन राजकुमारो का मुँह देखना नही चाहता। मेरी आज्ञा है—इनका वध करवाकर इनके सिर रानी को लाकर दे दो।

मन्त्री मन मे विचार करने लगा—दोनों कुमार निर्दोष है। यह सारी काली करतूत नई रानी मधुलता की है। मंत्री ने राजकुमारो को गुप्त रूप से अन्यत्र भेज दिया और नकली सिर रानी को दे दिये। राजकुमारो को बचाने में मंत्री सुमतिचन्द्र की बुद्धिमत्ता थी। रानी ने सिर देखे, उसे सन्तोष हो गया। राजकुमारो के जीवन में अनेकों दुःख भरी रातें आईं। किन्तु वे घबराये नही। फिर सुख भरे दिन भी आये। जीवन में ऐसे उतार-चढ़ाव तो आते ही रहते है। ऐसी मार्मिक, रोंगटे खड़े कर देने वाली घटनाएँ पाठक 'रात और दिन' में पढ़ेंगे।

प्रस्तुत पुस्तक के लेखन-कार्य में संयम-सूर्य, उपप्रवर्तक, जैन भूषण पं० पूज्य स्वामी जी श्री ब्रजलाल जी म० सा० की मंगल प्रेरणा रही, जो मेरे लिए एक महनीय संबल सिद्ध हुई। पण्डितरत्न, बहुश्रुत, परमाराध्य सद्गुरुवर्य युवाचार्य श्री मिश्रीमल जी म० सा० 'मधुकर' के आशीर्वाद ने मूल स्तंभ का कार्य किया। यह सब, जो निष्पन्न हुआ, इन्ही की बदौलत है। इन चारित्रात्माओ का वर्णन मैं किन शब्दो में करूँ ? मेरे पास शब्द ही नही है।

श्रीमान् डॉ० तेजसिंह जी गौड़, जो स्वयं एक अच्छे लेखक है, ने मेरा आग्रह स्वीकार कर इस पुस्तक की महत्त्वपूर्ण प्रस्तावना लिखी, उनका मैं हृदय से आभार मानता हूँ।

"एक राजा था, उसकी थी एक रानी। दो प्राण-प्रिय पुत्र भी थे। राज्य मे चारो ओर सुख-शान्ति का साम्राज्य था। प्रजा सब प्रकार से सुखी थी। एकाएक रानी बीमार पडी और किसी भी मूल्य पर उसे बचाया नही जा सका। मरते-मरते रानी ने पुनः विवाह न करने का वचन ले लिया। इसके पीछे रानी की भावना यह थी कि विमाता के आने से उसके लाडले-पुत्र दु खी होने से बच सकें। समय व्यतीत होता गया और रानी के विछोह का दु ख भी कम होता गया। कहा भी है कि समय सबसे बड़ी औषधि है। सभासदो के बार-बार आग्रह और मनुहार करने पर राजा अपना वचन भग कर पुन विवाह कर लेता है। नयी रानी युवा थी और राजा था वृद्ध। यह था बेमेल विवाह। राजा अपनी ढलती आयु मे युवा रानी की काम-तृप्ति नही कर पाता था। अचानक एक दिन रानी के सम्मुख युवा राजकुमार का आगमन होता है और राजकुमार को देखकर रानी कामासक्त हो मर्यादा भूलकर राजकुमार से काम-याचना कर बैठी। राजकुमार ने रानी की काम-याचना ठुकरा दी और रानी को उपदेश देता हुआ वहाँ से चला गया। इससे रानी अपमान की आग मे जल उठी। उसने त्रिया-चरित्रानुसार दोनो राजकुमारो पर अपने शीलहरण करने के प्रयास का आरोप लगाया और रानी के कहने पर रानी के मोह

मेरे साहित्यिक कार्यों के सत्परामर्शक तथा प्रेरक विख्यात विद्वान् डॉ० छगनलाल जी शास्त्री ने इस पुस्तक की पाण्डुलिपि का पर्यवेक्षण कर मुझे जो महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये, इसके लिए मैं उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। इससे मुझे अपनी इस कृति को परिष्कृत/परिमार्जित करने का सुअवसर मिला।

साथ ही साथ मेरी संयम-यात्रा के सहचर, सुहृद्वर मुनिश्री महेन्द्र कुमार जी 'दिनकर' एवं श्री दिनेश कुमार जी शर्मा, श्री ओमप्रकाश जी जैन 'पथिक' का भी स्मरण किये बिना नही रह सकता। प्रबुद्ध साहित्यकार, लेखक एवं संपादक श्रीमान् श्रीचन्दजी सुराना 'सरस' का तो मैं बहुत ही आभारी हूँ, जिन्होंने कलात्मक साज-सज्जा आदि द्वारा इस उपन्यास में चार चाँद लगा दिये। मेरी साहित्य-यात्रा के और भी सभी सहयोगी बन्धु साधुवाद के पात्र है। इसी प्रकार भविष्य में भी उनका योगदान प्राप्त होता रहेगा, इसी भावना के साथ लेखनी को विश्राम देता हूँ।

अभी तो इतना ही बहुत है। फिर कभी शेष बाते कहूँगा। 'रात और दिन' उपन्यास पाठको को रुचिकर लगेगा, ऐसी मुझे आशा है। इसे पढ़कर वे जीवन की टेढ़ी-मेढ़ी पगडडियो पर साहस, उत्साह और स्फूर्ति के साथ गतिशील रहने की चेतना अपने में संजोयेंगे।

जैन स्थानक
गोठन स्टेशन
दिनांक २५. २ ८३

—मुनि विनयकुमार 'भीम'

मे फँसे राजा ने भी बिना सोचे-समझे दोनो राजकुमारो को प्राण-दण्ड दे दिया। मन्त्री की युक्ति से दोनो राजकुमारो के प्राणो की रक्षा हुई किन्तु यह एक रहस्य ही रहा। जब रानी को पता चला कि राजकुमारो के वध से जन-आक्रोश भडक उठा है और वास्तविकता का भण्डाफोड़ हो गया है तो वह राजकुमारो के प्रति बदले की आग मे बराबर जलती रही और मरकर नागिन बनी तथा बदला लेने के लिए वह राजकुमारो के पास वन मे जा पहुँची। वहाँ वह मारी गई किन्तु एक राजकुमार उसके विष से प्रभावित हुआ। कालान्तर मे सुख-दुःख रूपी धूप-छांव मे महामन्त्र नवकार के सहारे समय व्यतीत हुआ और दोनो राजा बनकर अपने पिता से मिलने आते है। यह मिलन हर्ष की लहरें उत्पन्न कर देता है। अन्त समय मे राजा सयम ग्रहण कर लेता है और राज्यभार अपने पुत्रो को सौप देता है।

यह संक्षिप्त कथानक है 'रात और दिन' नामक एक उपन्यास का, जिसके लेखक हैं श्रमण सघीय युवाचार्य, बहुश्रुत, पण्डितरत्न 'श्री मधुकर' मुनिजी के युवा प्रतिभाशाली शिष्य मुनि श्री विनयकुमार 'भीम'। मुनिश्री 'भीम' के अभी तक चार-पाँच उपन्यास प्रकाशित हो चुके है। उनके इस उपन्यास की पाडुलिपि देखने का और आद्योपान्त अध्ययन करने का अवसर भी मिला। वैसे मुनिश्री भीम, मूलतः कवि एवं गीतकार है किन्तु हर्ष का विषय है कि वे गद्य भी लिखते है। न केवल लिखते है वरन् खूब लिखते हैं। उनका यह लेखन उत्तरोत्तर प्रौढता की ओर अग्रसर हो रहा है। प्रस्तुत उपन्यास 'रात और दिन' प्राचीन कथानक का आधुनिक सस्करण है। आजकल प्रायः ऐसा हो रहा है, जो

स्तुत्य है। कारण कि प्राचीन कथाएँ मनुष्य मे सद्गुणो का सचार करने वाली है। वे हमे सत्य मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती है, जीवन को सस्कार देती हैं, हमारे प्राचीन गौरव को उद्घाटित करती है और भटकते राही को सन्मार्ग का दिग्दर्शन कराती है।

यह कृति भाव के दृष्टिकोण से स्निग्धता लिये हुए है। भाषा सरल, सरस एव प्रवाहमयी है और है बोधगम्य। इससे सामान्य पाठकवर्ग को भाषा विषयक कोई कठिनाई नही आती है। इसके साथ ही विद्वान भी इस रचना का रसास्वादन कर सकते हैं। जहाँ तक शब्द चयन का प्रश्न है, मुनिश्री ने यथास्थान उनका सटीक प्रयोग किया है, जो देखते ही बनता है। इन सब बातो के अतिरिक्त इस उपन्यास मे दो बाते स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। यथा—

(१) इस उपन्यास मे बेमेल विवाह पर करारी चोट की गई है। साथ ही विमाता का भी स्वाभाविक एव आम-मान्यतानुसार चरित्र सामने आया है।

(२) सम्पूर्ण उपन्यास मे कर्म के अनुसार फल प्राप्ति के विधान का प्रतिपादन किया गया है। मनुष्य जैसे कर्म करेगा वैसा ही उसे फल मिलेगा। यह शाश्वत स्वर इस उपन्यास मे सुनाई देता है।

मुनिश्री ने इस उपन्यास के लेखन मे अपनी लेखनी को जिस प्रकार गतिमान रखकर स्वधर्म की मान्यताओ को प्रकट किया है और स्थान-स्थान पर उपदेशपरक शैली मे अपनी बात कही है, उससे यह उपन्यास और भी अधिक रोचक बन गया है तथा

पाठको की जिज्ञासा जागृत करने मे सफल है। मुझे पूरा-पूरा विश्वास है कि इस उपन्यास का सर्वत्र स्वागत होगा।

मुनिश्री भीम अभी युवा है। भविष्य मे उनसे अनेक आशाएं है। विश्वास है कि आगे वे इससे भी सुन्दर-सुन्दर ग्रन्थो का सृजन कर अपने लेखन के माध्यम से समाज का मार्गदर्शन करेंगे। इसी आशा और विश्वास के साथ—

छोटा बाजार
उन्हेल (उज्जैन)
दि० १-३-८३

डा० तेजसिह गौड़



आभार दर्शन

राजस्थान के मारवाड़ प्रदेश में नागौर जिले में एक छोटा सा गाँव नोखा चादावतो का है। यह धनिकों की बस्ती है। यही पर श्रीमान् एस० बादलचन्द जी चौरड़िया का वि० सं० १९७९ भाद्रपद कृष्णा ५ को स्वर्गीय सेठ श्री सिमरथमल जी सा० चौरड़िया के यहाँ जन्म हुआ। आपकी मातुश्री का नाम श्रीमती गट्टूबाई था। वे सरलता, दयालुता एवं निश्छलता की मूर्ति एवं धर्म-परायणा थी। उनके सभी गुण आप में विद्यमान है।

आपका प्रारंभिक शिक्षण राजस्थान मे ही हुआ। उसके बाद आप व्यवसाय हेतु आगरा पधार गये। आपके अग्रज श्री एस० रतनचन्द जी चौरड़िया सुज्ञ श्रावक है। आपके अनुज श्री एस० सायरचन्द जी सा० एवं सबसे छोटे भाई श्री एस० रिखबचन्द जी चौरड़िया का वर्तमान मे व्यवसाय केन्द्र मद्रास में ही है। आप सभी भाई यहाँ फाइनेन्स के व्यवसाय में संलग्न है। आपकी बड़ी बहन पतासी बाई भी भद्र प्रकृति की महिला है।

आप सरलमना, गंभीर एवं धार्मिक प्रकृति के है। आपकी ही तरह से आपकी धर्म-पत्नी श्रीमती सुगन कँवर बाई भी भद्र प्रकृति वाली महिला है। अपने विवेकयुक्त पुरुषार्थ एवं प्रामाणिकता की बदौलत आपने अपने फाइनेन्स के व्यवसाय में अच्छी सफलता प्राप्त की और खूब द्रव्यो-

पार्जन किया और अनेक सामाजिक धार्मिक संस्थाओ को सहायता प्रदान की।

वर्तमान में आप अनेक संस्थाओं से संबंधित है :—

उपाध्यक्ष :—श्री वर्धमान सेवा समिति, नोखा (राजस्थान)

संरक्षक —श्री जैन मेडिकल रिलीफ सोसायटी
श्री एस० एस० जैन एज्युकेशन सोसायटी
श्री एस० एस० जैन सेवा समिति
श्री अ० भा० भगवान् महावीर अहिंसा प्रचार संघ

सदस्य :—श्री दक्षिण भारत स्वाध्याय संघ, मद्रास

आप सज्जन व्यक्ति है। परम पूज्य स्वनाम धन्य स्वर्गीय गुरुदेव श्री हजारीमल जी म० सा० के प्रति प्रगाढ़ [illegible] शुरू से रही। आपकी पूज्य स्वामी जी श्री ब्रजलाल [illegible] म० सा०, पं० र० बहुश्रुत युवाचार्य श्री मिश्रीमल जी म० सा० 'मधुकर' के प्रति अटूट श्रद्धा, निष्ठा एवं विश्वास है। प्रस्तुत उपन्यास 'रात और दिन' में आपने जो सहयोग दिया, वह प्रशंसा के लायक है। इसी तरह का सहयोग भविष्य में भी मिलता रहेगा, ऐसी हम आशा करते है। इस उपन्यास के लेखक है युवाचार्य श्री के शिष्य युवा मनीषी, कवि, वक्ता व गायक मुनि श्री विनय कुमार जी 'भीम'। दिन प्रतिदिन हमारी संस्था लोकप्रियता हासिल कर रही है, यह एक संतोष का विषय है।

भवदीय
हुक्मीचन्द कोठारी
(मन्त्री) मुनि श्री हजारीमल स्मृति प्रकाशन, ब्यावर

उदार - सहयोगी :



धर्मप्रेमी, उदारमना, देव-गुरुभक्त

श्रीमान बादलचन्द जी चौराड़िया

[नोखा चाँदावतों का तथा मद्रास]

रात और दिन

रात और दिन

१

भरतखण्ड में कई प्रकार के नगर थे। इन नगरो में
एक विशाल नगर था कनकपुर, जो कि अपनी सुन्दरता के
लिए दूर-दूर तक प्रसिद्ध था। नगर के राजमार्ग काफी लम्बे,
चौडे एवं सीधे थे। राजमार्ग के दोनो ओर नालियाँ थी जो
गन्दे पानी को नगर से बाहर एक ओर निकाल देती थी।
राजमार्ग के दोनो ओर पंक्तिबद्ध और सुन्दर तथा विशाल
भवन थे। नगर मे कुछ छोटे मकान भी थे किन्तु वे कला-
त्मक एवं सुन्दर बने हुए थे। नगर में गन्दगी नाम मात्र
को भी नही थी। नगर की स्वच्छता का पूरा-पूरा ध्यान
रखा जाता था। नगर पूर्ण रूप से सुन्दर एवं आकर्षक था।

जिस प्रकार कनकपुर सुन्दर नगर था उसी प्रकार वहाँ
के राजा वीरधवल न्यायप्रिय, गुणवान, प्रतापी तथा शूर-
वीर थे। उनके न्याय की चर्चा दूर-दूर तक होती थी।
महाप्रतापी राजा वीरधवल राज्य कार्य मे बड़े ही निपुण
थे। वे अपनी प्रजा का पालन पुत्र की भाँति करते थे।
राजा अपनी प्रजा मे कोई भेद भाव नही रखते थे। दुःखी
एवं असहाय व्यक्तियो का राजा द्वारा विशेष ध्यान रखा
जाता था। सभी के साथ समान तथा सम्मानजनक व्यव-
हार किया जाता था। राज्य में कोई ऊँचा हो या नीचा,
सभी व्यक्तियो के साथ न्याय किया जाता था। इन्ही गुणों

के कारण राजा को यश प्राप्त था। उनकी कीर्ति चारों ओर फैली हुई थी। ऐसे न्यायप्रिय और दयालु राजा को पाकर कनकपुर की प्रजा अपने को धन्य समझती और बड़े सुख और चैन से अपना जीवन व्यतीत करती थी।

राजा वीरधवल की रानी पतिव्रता, शीलवती, गुणवती तथा धर्मपरायणा थी। रानी का नाम पद्मावती था। वह अद्वितीय रूप-सौन्दर्य की स्वामिनी थी तथा राजा के अनुकूल ही गुणो से परिपूर्ण थी।

राजा वीरधवल के राज्य में सुमतिचन्द्र नाम का मन्त्री था। वह बड़ा ही बलवान, बुद्धिमान तथा नीतिज्ञ था। वह चारों नीति—साम, दाम, दण्ड, भेद में पारंगत था। मन्त्री सुमतिचन्द्र निर्ग्रन्थ धर्म का उपासक था। वह वफादार और आज्ञाकारी, स्वामिभक्त था। अपने को राजा एवं प्रजा का सेवक समझता था।

जिस राज्य में न्यायप्रिय और दयालु राजा हो, शीलवती और धर्मपरायणा रानी हो तथा स्वामिभक्त और नीतिनिपुण मन्त्री हो वहाँ प्रकृति की विशेष कृपा होगी ही। और यही कारण था कि राज्य में दूध-दही की नदियाँ बहती थी। हरे-भरे वृक्षों की टहनियाँ हवा में झूलती थीं, वृक्षों की पत्तियाँ मधुर संगीत वातावरण में बिखेरती थीं, चारो ओर फैले पुष्प के पौधे मन को प्रसन्न कर देते थे। इसी राज्य में उर्वरा भूमि तथा प्रचुर मात्रा मे खनिज सम्पत्ति थी। हमेशा समय के अनुसार वर्षा होती थी, कभी अकाल नही पड़ा था। राज्य में नर-नारी तथा पशु

पक्षी भी आनन्द तथा सुख-शान्ति से अपना जीवन व्यतीत करते थे।

ऐसे सुन्दर और खुशहाल समय में रानी पद्मावती ने गर्भ धारण किया। राजा को जब पता चला तो राजा बड़े प्रसन्न हुए। उन्होने रानी को शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से स्वस्थ रखने का पूरा प्रबन्ध किया। रानी के आमोद-प्रमोद की विशेष व्यवस्था करवाई गई। रानी पद्मावती भी प्रसन्नचित्त रहकर पूर्ण सावधानी से गर्भ की पालना करने लगी। इसी तरह कुछ महीने व्यतीत हो गये।

महाराजा वीरधवल आराम कर रहे थे। ठीक उसी समय एक दासी लगभग दौड़ती हुई महाराज के सम्मुख उपस्थित हुई।

"महाराज, बधाई हो!" दासी ने अपनी सासो पर काबू पाते हुए कहा।

राजा ने दासी की ओर देखते हुए पूछा—

"कहो, क्या बात है?"

"महाराज को पुत्र-रत्न प्राप्त हुए हैं।"

राजा ने यह शुभ समाचार सुना तो वे प्रसन्नता में झूम उठे किन्तु उन्होंने दासी की ओर गौर से देखते हुए कहा—

"हुए है?"

"जी महाराज! कनकपुर राज्य को दो राजकुमार प्राप्त हुए है।"

तब राजा की प्रसन्नता और बढ़ गई। उन्होने अपनी तर्जनी अँगुली से रत्नजड़ित स्वर्ण अगूँठी उतार कर दासी को देते हुए कहा—

"तुमने हमें जीवन का सबसे सुखद समाचार सुनाया, हम बहुत खुश हुए है, यह लो तुम्हारा इनाम।"

दासी ने अगूँठी ली और राजा का अभिवादन किया।

राजा ने पुनः कहा—

"जाओ और हमारे अनुचर से कहो कि वह महामन्त्री सुमतिचन्द्र को हमारे पास भेज दे।"

"जी बहुत अच्छा महाराज !"

दासी चली गई। कुछ ही समय पश्चात मन्त्री सुमतिचन्द्र ने प्रवेश किया।

"महाराज की जय हो !"

"आओ महामन्त्री !"

"महाराज ! सेवक को आपने याद फरमाया।"

"हाँ महामन्त्री ! आज हम बहुत खुश है। हमें स जमाने की खुशियाँ प्राप्त हो गई। हमें अपने बेटो के अ की सुन इतनी प्रसन्नता हुई कि हम वर्णन नही कर सकते जाओ मन्त्री ! हमारे उत्तराधिकारी के आने की खबर स राज्य मे सुना दो और अन्न-वस्त्र दान दो, मिठाइ बटवाओ।"

"जी महाराज !" मन्त्री ने प्रसन्नता से कहा और राजा का अभिवादन कर चल दिया।

महाराज वीरधवल प्रसन्न होते हुए महारानी पद्मावती की ओर चल दिये।

राजकुमारों के जन्म का समाचार पाकर सारे राज्य में प्रजा भी खुशी से नाच उठी। राज्य में खूब खुशियाँ मनाई गईं और एक लम्बे समय तक पुत्र-जन्म-उत्सव मनाया गया।

दोनों राजकुमार सुन्दर थे। राजा-रानी उन्हें देख-देख फूले नही समाते थे। उनकी देखभाल के लिए कई सेविकाएँ थी जो समय-समय पर राजकुमारो की साल-सम्हाल के लिए तत्पर रहती थी। दोनो राजकुमार धीरे-धीरे बड़े होने लगे। राजकुमारो का नाम-करण निमित्तज्ञो की सलाह एवं परिजनो की सहमति से वीरभान तथा उदयभान किया गया। समयानुसार दोनों कुमार बड़े हुए। वे शूर-वीर, गुणी तथा प्रतापी निकले। उनकी शिक्षा-दीक्षा का विशेष प्रबन्ध किया गया। ऐसे रूपवान, गुणवान और प्रतिभावान पुत्रो को पाकर राजा अपने को धन्य समझने लगे। राजा के पिछले जन्म मे किए सुकृत कर्मों के फलस्वरूप ही आज उन्हे तेजस्वी पुत्र रत्न प्राप्त हुए। राजा प्रजा सभी सुखमय जीवन व्यतीत कर रहे थे और समय गुजरता जा रहा था।

समय की गति बड़ी तेज होती है। उसे पकड़ पाना मानव के वश की बात नही। मनुष्य तो इसके साथ-साथ

कदम मिलाकर चलना चाहता है किन्तु कुछ तो साथ हो लेते है वे भी क्षणिक समय तक और कुछ पीछे छूट जाते है। और जो पीछे छूट जाते है वे पछताते है।

समय अपनी अविराम गति से भाग रहा था। प्रकृति अपने नियमानुसार कार्य कर रही थी। राजा-रानी, राज कुमार और प्रजा सभी खुशी थे। कहते है, होनी को कोई नहीं टाल सकता। वह बड़ी बलवान होती है। जो होना है और जिस समय होना है, होकर ही रहता है।

अचानक रानी पद्मावती को रोग ने आ घेरा। वे अस्वस्थ रहने लगी। रोग भी असाधारण और असाध्य था। जिसके कारण रानी का शरीर दिन-प्रतिदिन निर्बल होता चला गया। राजा-प्रजा सभी चिन्तित हुए। रानी के रोग का उपचार करने हेतु दूर-दूर से आयुर्वेद में पारंगत वैद्यो को बुलवाया गया। रानी का उपचार करवाया गया कई प्रकार की जड़ी-बूटियाँ औषधियाँ दी गयी। हर प्रकार से रोग-निदान के लिए वैद्य हकीम जुट गये। मन्त्र-तन्त्र और झाड़-फूँक करने वाले भी रानी के रोग-निदान के लिए राज्य महल में पहुँच गये। सभी ने जी-जान से प्रयत्न किया किन्तु रानी का रोग और बढ़ता गया। वह दिन प्रतिदिन निर्बल होती गई, उसका शरीर गलता गया।

राजा की समझ में नही आ रहा था कि वह इस हेतु क्या करे किन्तु रानी इसे अपने अशुभ कर्म का ही फल समझ रही थी। उसका विश्वास था कि 'कर्म की रेखा

अमिट होती है और कर्मों के फल भोगने ही पडते है।'
उसका चिन्तन चलता है और वह सोचती है—

'कर्म के फल से आज तक कोई नही बच पाया। चाहे राजा हो या रंक। जिसने जैसा किया है, वैसा भोगेगा ही, फिर भला मैं क्यों कर वंचित रहती। जो कुछ मैंने अपने पिछले जन्म में किया होगा उसका फल तो भोगना ही पड़ेगा। लेकिन दु:ख इस बात का है कि यदि मेरी मृत्यु हो जाती है तो मेरी आँख की ज्योति, फूल से कोमल इन दोनो कुमारो का क्या होगा? यह भी सही है कि जो आया है वह जायेगा। जिसने जन्म लिया है वह मरेगा ही। आज तक कोई अमर-फल खाकर नही आया, लेकिन समय की बात है। पका आम वृक्ष से गिरे तो बात समझ में आती है किन्तु असमय अनहोनी होती है तो विचार करने के लिए बाध्य होना पडता है। मुझे भी एक न एक दिन तो जाना ही है। यदि यह जाना कुमारो के बड़े हो जाने पर और उनके बडे विवाह हो जाने के पश्चात् हो तो किसी प्रकार का दु:ख नही। यदि मैं अभी काल कवलित हो गई और महाराज ने पुनः विवाह कर लिया तो मेरे फूल से कुमार विमाता के अत्याचार कैसे सहन कर पाएँगे?'

विमाता के अत्याचारो से कुमारो को होने वाले दु:ख की कल्पना का आभास होते ही महारानी और अधिक चिन्तित हो उठी। मुख म्लान हो गया, सांस तेज गति से चलने लगी, आँखे अन्दर को धँसती सी प्रतीत होने लगी

और एकाएक उनके मुख से चीख निकल पड़ी। चीख क
आवाज सुनकर सेविकाएँ दौड पड़ी और महारानी व
आराम पहुँचाने के लिए सेवा शुश्रूषा में लग गयी। ए
उन्हें पानी पिलाने लगी, कोई हवा करने लगी, कोई हाथ
पांव दबाने लगी और एक सेविका महाराज को बुला
दौड़ पड़ी।

महाराज वीरधवल ने दासी के मुँह से जैसे ह
महारानी के अधिक अस्वस्थ होने के समाचार सुने,
अन्तःपुर की ओर दौड़ पड़े।

महारानी के कक्ष में जैसे ही महाराज ने प्रवेश किय
सेविकाएँ हट गयी। चिन्तित स्वर में उन्होंने पूछा—

"देवी ! क्या हो रहा है आपको ? अब आपका स्वास्थ्य
कैसा है ?"

सेविकाओ को सम्बोधित करते हुए पुनः बोले—
"जाओ, प्रहरी को सूचना दो कि वह वैद्यराज को तत्काल
उपस्थित करे।"

महारानी की ओर निहारते हुए—

"देवी ! कैसा स्वास्थ्य है अब आपका ?.........बोलो,
बोलो, कुछ तो कहो.........हाँ हाँ कहो.........। अपनी आँखें
खोलो, देखो तो, मैं तुम्हारा वीरधवल तुम्हारे पास
बैठा हूँ।"

रानी की पलकें कुछ हिलती है, होठों से बुदबुदाहट की
ध्वनि निकलती है। फिर शरीर में कुछ हलचल सी होती

है। रानी धीरे-धीरे आँखे खोलती है। अपने दोनो हाथ उठाकर जोडती है और कहती है—

"म हा······रा······ ···ज"

"हाँ हाँ कहो क्या बात है? क्या कहना चाहती हो? कहो, तुम्हारे मन में जो भी हो सब साफ-साफ कह दो। तुम्हारी इच्छा पूरी करने के लिए मैं कोई कसर बाकी नही रखूँगा।"

"पा·······नी"

पानी की आवाज सुन एक सेविका तुरन्त स्वर्णपात्र में शीतल जल भरकर ले आई। महाराज ने अपने हाथो का सहारा देकर रानी को विस्तर से उठाया और रानी के मुख से शीतल जल का पात्र लगा दिया।

रानी के मुख मे कुछ पानी जाते ही उसे सन्तोष हुआ और पुनः वह लेट गई।

तब महाराज बोले—

"देवी! तुम चिन्ता मत करो। तुम जल्द ही स्वस्थ हो जाओगी।"

"नही महाराज!····मैं अब ठीक होने वाली नही हूँ। मुझे मालूम नही क्या कि आपने मेरा रोग दूर करने के लिए कितना उपचार करवाया? कोई कसर बाकी नहीं रखी। किन्तु रोग घटने के बजाय बढता ही जा रहा है और अब मैं मृत्यु के निकट खड़ी हूँ।"

"नही देवी! तुम जीवित रहोगी, मेरे लिए और अपने दोनो कुमारों के लिए।"

रानी ने अपने नेत्रों को एक बार वन्द किया और पुनः खोलते हुए बोली—

"टूटी की बूटी नहीं है महाराज ! मैंने आपके साथ रहकर.......बहुत सुख भोगा.......अब मेरा समय आ गया है। अन्तिम समय में मैं आपसे कुछ माँगती हूँ।"

राजा वीरधवल ने रानी का हाथ अपने हाथो में लेते हुए प्रेमपूर्वक कहा—

"देवी ! तुम स्वस्थ हो जाओगी, ऐसा मेरा विश्वास है किन्तु फिर भी तुम जो मांगना चाहो, निश्चिन्त होकर माँगो। मैं तुम्हारी हर इच्छा पूरी करूँगा।"

सुनकर रानी के चेहरे पर सन्तोष की रेखा उभर आई। वह धीमे स्वर में बोली—

"मेरे दोनों कुमार.......मेरी आँखों के तारे.......ये बड़े प्रतापी और होनहार निकलेंगे.......। मेरे बाद....... आप इनका पूरा ध्यान रखना। इन्हें तनिक भी कष्ट न होने पाये।"

"महारानी ! जैसे वे तुम्हारी आँखों के तारे है, वैसे मेरे भी दुलारे है। भला, मैं इन्हें कैसे कष्ट सहने दूँगा ?"

"एक वचन और महाराज.......!"

"हाँ, देवी ! कहो।"

"मेरी मृत्यु के बाद.......आप.......दूसरा विवाह न करें।"

"मैं वचन देता हूँ कि दूसरा विवाह नही करूँगा।"

तब रानी के चेहरे पर प्रसन्नता छलकने लगी मानो ारे संसार की दौलत मिल गई हो। रानी ने कहा—

"अब मैं सन्तोष से मर सकती हूँ।"

तब राजा वीरधवल ने कहा—

"नहीं, तुम जल्द ही ठीक हो जाओगी।"

"नहीं-नहीं स्वामी स्वा‥‥मी ‥।"

और अचानक रानी को खाँसी चली और लगातार चलती ही गई। रानी ने एक हाथ से अपना सीना दवा रखा था। दर्द की तेज लहर उठी। रानी के मुँह पर दर्द की लहर छाती चली गई। हाथ-पैर में ऐंठन होने लगी और कुछ ही क्षणो में रानी ने हिचकी ली तथा पलक झपकते ही गर्दन एक ओर को लुढक गई।

उसी समय कमरे मे राजवैद्य ने प्रवेश किया। किन्तु अब क्या शेष था? जीवित व्यक्ति के लिए मनुष्य सभी कुछ करता है, किन्तु जब यह शरीर—हाड़-माँस का पुतला निर्जीव हो जाता है तब इसके लिए एक ही कार्य रह जाता है और वह है अन्तिम क्रिया। □□

२

कनकपुर राज्य की महारानी पद्मावती की असमय मृत्यु की खबर सारे राज्य में आग की भाँति फैल गई। सारे राज्य में शोक छा गया। नदी, पहाड, खेत, खलिहान,

पेड, पौधे, पशु, पक्षी मानो सभी अपने राज्य की महारानी के मृत्यु शोक में डूब गये। वह महारानी जो दयावान ममतामयी और विशाल हृदय वाली थी। वह रानी जो प्रजा से अपने पुत्र के समान प्रेम करती थी। वह रानी जो पतिव्रता थी जिसकी कीर्ति दूर-दूर तक थी वही महारानी आज इस संसार को छोड़कर उस मार्ग पर चली गई जिससे लौटकर आज तक कोई नही आया। बड़ा विचित्र है यह मार्ग! इस पर जाने वाला पीछे मुड़कर नहीं देखता। छोड जाता है वह अपने अच्छे-बुरे कर्म और उन्ही के सहारे उसे याद किया जाता है।

महारानी पद्मावती भी अपने पीछे प्रेम और दया छोड़ गई थी। छोड गई थी वह सत्कर्म जिनके सहारे लोग उसे याद किया करते थे। सभी दुःखी थें और रानी की याद में आँसू बहा रहे थे, रो रहे थे और काल को धिक्कार रहे थे। काल द्वारा माँ समान महारानी को छीन लेने पर राज्य की जनता, पशु-पक्षी सभी दुःखी थे।

और दुःखी थे महाराज, राजा वीरधवल। उनके मन में बार-बार यही सवाल उठता कि अब रानी बिना मेरा यह जीवन कैसे बीतेगा? दोनो राजकुमार बिना माँ के कैसे रहेंगे?

किन्तु काल के सामने कौन जीत पाया है? समय के अनुसार जो होना है, होता है। इसी तरह धीरे-धीरे समय आगे खिसकता गया। रानी का दाह संस्कार पूरे राज सम्मान के साथ किया गया था। सारे राज्य में कई दिनों तक शोक छाया रहा। समय बीतने पर वे शोक के बादल

ी धीरे-धीरे छँटने लगे। सब कुछ सामान्य होता गया।
योंकि समय वह औषधि है जो सभी घाव भर देती है।

राजा वीरधवल ने दोनो राजकुमारों के पालन-पोषण
में कोई कसर नही छोड़ी। उनका हर सम्भव ध्यान रखा
गया। उनकी शिक्षा के लिए विशेष प्रबन्ध किया गया।
दोनो राजकुमार बल और बुद्धि में श्रेष्ठ निकले। मन्त्री
सुमतिचन्द्र की देख-रेख में दोनो राजकुमार शिक्षा-दीक्षा
ग्रहण करने लगे तथा दोनों कुमार जैन धर्म के संस्कारों
से युक्त हुए। योग्य तथा बुद्धिमान मन्त्री ने दोनो
कुमारों को जैन धर्म की सीख एवं उनका पालन अच्छी
तरह समझाया। दोनो कुमार मन्त्री की बात मानते और
उसका आदर करते।

कहा जाता है कि जैसी संगत होती है वैसी ही रंगत
होती है और उसका जीवन मे भारी प्रभाव होता है।
यदि महापुरुष की संगत हो तो जीवन महान बन जाता है,
अच्छे गुण सीखने को मिलते है। सुमतिचन्द्र मन्त्री के साथ
रहकर दोनो कुमार भी सत्कर्म की ओर अग्रसर होते गये।
मन्त्री की आज्ञा का पालन करने लगे, उसके द्वारा बताये
गए सद्‌मार्ग पर चलने लगे। बड़ों का सम्मान करना तथा
धर्म पर अटूट विश्वास रखना ये बाते मन्त्री ने राजकुमारो
को अच्छी तरह समझाई थी। ऐसे आज्ञाकारी तथा
धर्म प्रवृत्ति से युक्त राजकुमारो पर कनकपुर की प्रजा गर्व
करती थी। प्रजा अपने को धन्य समझने लगी। राजकुमारो
को अच्छी शिक्षा देने और उनके जीवन को उचित दिशा
देने मे मन्त्री ने कोई कसर नही छोडी।

राजा वीरधवल राज्य कार्य में तल्लीन रहते थे। उनका जीवन सामान्य गति से गुजर रहा था। मनुष्य प्रतिज्ञा तो कर लेता है, किसी को वचन तो दे देता है किन्तु उसे निभाना वहुत कठिन हो जाता है क्योंकि यह तो वहुत ही कठिन कार्य है। वे बिरले ही होते है जो प्रतिज्ञा-नुसार चलते है, वचन का पालन करते है। और फिर व्यक्ति पर कुसंग का भी गहरा प्रभाव गिरता है। महाराज वीरधवल के पास इधर-उधर से निम्न विचारधारा वाले व्यक्ति जिन्हे चाटुकार कहा जा सकता है आने लगे, जो चाहते थे कि महाराज पुनः विवाह करे। राजा वीरधवल को ऐसे ही व्यक्तियो ने कई वार पुनः विवाह के लिए सलाह भी दे डालो। इसी प्रकार एक बार राजा वीर-धवल अपने कक्ष में आराम कर रहे थे तभी कुछ मन्त्री तथा सामन्त वहाँ उपस्थित हुए, राजा का अभिवादन किया, पश्चात एक मन्त्री ने कहा—

"महाराज ! हम मन्त्रीगण आपसे कुछ निवेदन करना चाहते है।"

"कहो, क्या बात है ?"

"कनकपुर राज्य में सभी व्यक्ति खुशहाल है। किसी भी व्यक्ति को किसी प्रकार का कष्ट नही है। आपके स्नेह और न्याय से सभी सन्तुष्ट है किन्तु....।"

"किन्तु क्या मन्त्रीवर ?"

"महाराज हमें किसी बात की कमी नही किन्तु एक बात की कमी अखरती है।"

"कमी, कौन सी कमी ? मन्त्रीवर ! जो कुछ कहना हो निःसंकोच हो साफ-साफ कहो। वह कौन-सी कमी है जो तुम्हे महसूस हो रही है ?"

"महाराज ! कनकपुर राज्य की प्रजा को राजमाता और आपको महारानी की कमी हम सभी को महसूस हो रही है।"

राजा कुछ चिन्तित होकर बोले—

"यह तो ठीक है। कमी तो हमको भी महसूस होती है किन्तु हम वचनवद्ध है। हमने महारानी पद्मावती को वचन दिया था कि हम दूसरा विवाह नही करेंगे।"

"महाराज ! कुछ वचन ऐसे होते है जो प्रजा की भलाई तथा आवश्यकता होने पर तोड़ दिये जाते है, जिनका पालन सम्भव नही होता।"

"नही मन्त्रीवर ! हम""हम भला यह वचन कैसे तोड़ सकते है ?"

"महाराज ! रानो के विना राजा की शोभा नही होती है। जिस प्रकार चॉद बिना रजनी और नमक विना भोजन व्यर्थ है उसो प्रकार जीवन मे स्त्री का होना भी आवश्यक है अतः आपको पुनः विवाह कर लेना चाहिये।"

महाराज वीरधवल कुछ सोचने लगे। मन्त्रो के तर्क ने उन्हे सोचने पर विवश कर दिया।

मन्त्री ने पुनः कहा—

"महाराज ! यह महल, यह राज्य रानी के अभाव में सूना-सूना लगता है और रानी के विना आपका जीवन

भी सूना है। महाराज ! आप अपना जीवन तो किसी प्रकार व्यतीत कर लेंगे किन्तु दोनों राजकुमारो का क्या होगा ? उन्हें भी तो कभी माँ की कमी महसूस होती होगी ? उनके दिल में भी तो माँ की ममता को, माँ के प्यार को पाने की लालसा जागती होगी ? माँ के अभाव में उनका जीवन नीरस हो गया है। अपने लिए न सही अपने दोनों कुमारो के लिएं ही आप पुनः विवाह पर विचार करे तो उचित होगा।"

"वह तो ठीक है किन्तु रानी पद्मावती का विश्वास, जो कि हमारे प्रति था, टूट जायेगा। हम क्या करे क्या नही ? हमारी तो कुछ भी समझ में नही आ रहा है।"

मन्त्री ने पुनः कहा—

"महाराज ! आप राज्य के सर्वेसर्वा है। आपको राज्य के लिए, प्रजा के लिए और दोनों राजकुमारों के लिए, उनकी भलाई के लिए दूसरा विवाह करना ही उचित है। इसमें कोई प्रतिज्ञा भंग नही होगी अपितु रानी की आत्मा को शान्ति ही मिलेगी।"

सुनकर राजा मौन हो गये और सोचने लगे कि क्या उचित है क्या अनुचित ?

राजा को मौन देखकर सभी मन्त्रीगण सोचने लगे कि महाराज ने स्वीकृति दे दी।

मन्त्री ने कहा—

मी नही है। योग्य और सुन्दर कन्या का आपके लिए
एश्ता ले आवे।"

महाराज के जबाव न देने पर मन्त्री ने पुनः कहा—

"महाराज ! हमारे राज्य कनकपुर के पास ही श्रीपुर
ाम का राज्य है। वहाँ के राजा वसु को कन्या बड़ो ही
ुणवती, बुद्धिमान तथा सुन्दर है। यौवन और रूप-रंग
ें वह चन्द्रमा के समान है। राजा वसु भी अपनी कन्या
ा विवाह आपसे करने के लिए उत्सुक है।"

कन्या के रूप और यौवन की चर्चा सुनकर राजा
ा मन भी ललचा उठा। पत्थर कठोर होता है किन्तु
उस पर बार-बार चोट की जावे तो वहाँ पर भी निशान हो
जाता है और अन्त मे वह टूट जाता है। फिर राजा वीर-
ध्वल तो मानव थे। उन्होने कहा—

"ठीक है, यदि आप सभी चाहते हैं तो यही होगा।"

राजा वीरधवल ने अपने यहाँ से एक दूत को श्रीपुर
भेजा। दूत श्रीपुर जाकर राजा वसु के समक्ष उपस्थित
हुआ। दरबार में जाकर दूत ने राजा का अभिवादन
किया फिर बोला—

"महाराज ! मैं कनकपुर राज्य से आपकी सेवा में उप-
स्थित हुआ हूँ।"

राजा वसु बोले—

"कहो, क्या सन्देश लाये हो ?"

"कनकपुर राज्य के महाराज वीरधवल की कीर्ति तो
महाराज ने सुनी ही होगी।"

"हाँ-हाँ राजा वीरधवल बड़े ही शूरवीर, न्यायप्रि
और दयालु है।"

"हमारे महाराज की महारानी की असमय मृत्यु हे
गई है।"

"हाँ, यह भी हमें मालूम है। राजा वीरधवल ए
योग्य राजा है। अभी उनकी उम्र भी अधिक नही है। उ
दूसरा विवाह कर लेना चाहिए।"

"जी महाराज! मैं यही सन्देश लेकर आपके सम
उपस्थित हुआ हूँ। हमारे महाराज चाहते है कि उनक
विवाह आपकी कन्या से हो। यह जोड़ी बहुत ही सुन्द
रहेगी।"

"यह तो हमारे लिए बहुत ही खुशी की बात है।"

"तो फिर महाराज! मैं जाकर आपकी स्वीकृति क
सूचना दे दूँ।"

"हाँ, मेरी ओर से बात पक्की।"

राजा वीरधवल के दूत ने वापिस आकर राजा व
को स्वीकृति बतला दी। विवाह की तैयारियाँ होने लगी
निश्चित तिथि को राजा वीरधवल तथा राजकुमा
मधुलता का विवाह सम्पन्न हो गया। राजकुमारी मधुलत
अब कनकपुर की महारानी बनकर आ गई। राजा वसु
राजा वीरधवल एवं बारातियो का खूब आदर-सत्का
किया था। विवाह समारोह बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुअ
था।

महारानी मधुलता का कनकपुर राज्य में खूब आदर-सत्कार हुआ। महाराज दूसरा विवाह कर खुश थे। वे सुन्दर और यौवन से भरपूर महारानी को पाकर अपने भाग्य को सराहने लगे। धीरे-धीरे महाराज पर रानी के रूप-सौन्दर्य का प्रभाव पड़ने लगा। महाराज रानी के रूप में ऐसे फँसने लगे कि राज-काज से उनका ध्यान हट गया। रात-दिन वे महारानी के सामीप्य में रहने लगे। धीरे-धीरे उनका मन राज्य के काम-काज और प्रजा के कार्यों से हटने लगा।

रानी मधुलता खूबसूरत और यौवन से भरपूर थी। वह अपने पति के रूप मे राजा वीरधवल को पाकर असंतुष्ट थी। वह विचार करने लगी कि—

'मुझे क्या पता था कि मेरे पति के रूप में ये राजा वीरधवल होगे। मैं तो समझी थी कि राजा वीरधवल सुन्दर और जवान होगे किन्तु ये तो·······इनकी अवस्था तो ढलने लगी है। इनके केश भी कही-कही से श्वेत होने लगे है। विवाह से पूव मैंने इन्हे देखा भी तो नही था। अहो······· मेरे पिता ने यह क्या कर डाला? कितना बडा अन्याय किया है मेरे साथ? अभी मेरी उम्र ही क्या है? कहाँ मैं और कहाँ ये महाराज? हम दोनो का मेल कितना हास्यास्पद है? मैं अपना सारा जीवन इनके साथ किस प्रकार व्यतीत करूँगी? ये तो डूबते सूर्य है, न जाने कब अस्त हो जावें फिर मेरा क्या होगा?'

रानी के मन मे ये विचार आते रहे। वह सोचने लगी,

'माता-पिता ने सिर्फ महाराज का धन-वैभव और ... राज्य ही देखा, मेरे लायक पति नही देखा। उन्होंने तो मेरा विवाह कर अपने सिर का बोझ उतार दिया। मेरा जीवन नरक बन गया। वास्तव में जो माता-पिता विना सोचे-विचारे बेमेल विवाह कर देते है, उनकी ... दु:खी ही होती है। स्वार्थ में जो माता-पिता अन्धे हो जाते है और अपनी कन्या को किसी भी व्यक्ति के साथ बांध देते है, वे तो दु:खी होते ही है, कन्या को भी जीवन भर जल-जल कर जीना होता है। मैं तो अभी युवा हूँ। मेरी भी तो कुछ इच्छाएँ है, कुछ उमंगे है। महाराज और मेरी जोड़ी तो पिता-पुत्री के तुल्य है फिर मेरा जीवन इनके साथ किस प्रकार बीतेगा ?'

यही विचार करते-करते रानी का मन दु:खी होने लगा। इतने मे अपनी नई माँ को प्रणाम करने दोनों राजकुमार वीरभान और उदयभान ने रानी के कक्ष में प्रवेश किया।

"प्रणाम माताजी !"

"अहो...वीरभान और उदय...आओ-आओ।"

दोनो राजकुमार अपनी नई माँ के समीप ही बैठ गये।

"माताजी कनकपुर राज्य और यह महल कैसा लगा आपको ?"

दोनों राजकुमार किशोरावस्था पार कर गये थे। उनक

चेहरा मासूम और भोला दिखाई दे रहा था। रानी उनके चेहरे की ओर देखते हुए बोली—

"हाँ, यह महल बहुत बड़ा और सुन्दर है। यहाँ के लोग भी भले है। कनकपुर राज्य मुझे अच्छा लगा।"

रानी मधुलता दोनों के चेहरो को गौर से देख रही थी और सोच रही थी कि इनका चेहरा कितना सुन्दर और लुभावना है। इनकी चाल में कितनी मस्ती है। दोनों युवावस्था मे पहुँच गये है। उज्ज्वल ललाट, रेशम से केश और इनका रूप तो ऐसा है कि इनके समक्ष कामदेव भी लज्जित हो जावे। रानी की आँखो में वासना के डोरे तैरने लगे। वह मान-मर्यादा और माता-पुत्र सम्बन्ध सभी छोड़कर वासनान्ध हो सोचने लगी—

'इस कुल में इतने सुन्दर राजकुमारो के होते हुए भी मेरे माता-पिता ने यह क्या किया? क्यों मुझे वृद्ध राजा के पल्ले बाँध दिया? यदि मेरा विवाह इसी राज्य में और इसी घराने में करना था तो इन्ही कुमारो में से एक को चुन लिया होता। फिर मेरा जीवन स्वर्ग हो जाता और मैं निहाल हो जाती।'

यह सोचते-सोचते रानी के मन में वासना का तूफान उठ खडा हुआ, वह पूर्ण रूप से वासना में डूब गई थी। उसने सोचा, ठीक है मैं इन्ही कुमारों के साथ राग-रंग में अपना समय व्यतीत करूँगी। वह दोनों कुमारों से बोली—

"कनकपुर आकर मुझे किसी बात का दुःख नहीं है। बस, एक बात मन में खटकती है।"

"वह क्या माताजी ?"

राजकुमारों की ओर वासनात्मक निगाहों से दे-
हुए रानी ने कहा—

"उदयभान और वीरभान ! तुम दोनों मुझे माँ म
कहा करो।"

"क्यो माताजी ! आप तो हमारी माँ के स्थान प
आई है। भला फिर हम आपको माँ क्यो नही कहे ?"

"मैं तो.......मैं तो तुम्हारी उम्र की हूँ।"

"तो क्या हुआ, आप है तो हमारी माँ के समान।"

"नही नही.......यही बात मुझे दिन-रात खटकती
है कि मेरा विवाह तुम्हारे पिता से क्यो हुआ, तुमसे ...
नही ?"

आश्चर्यचकित कुमार रानी के चेहरे को देखते रहे।
रानी ने पुनः कहा—

"हाँ कुमार ! मैं तो तुम दोनो पर मुग्ध हूँ और तुम्हे
चाहने लगी हूँ। एक ही नजर में तुमने न जाने क्या जादू
कर दिया है मुझ पर कि मैं तुम्हारी दीवानी हो गयी
अब तुम मेरे साथ काम-क्रीडा में मस्त रहो। मैं तुम्हे अपना
पति मानूँगी। मैं तुम्हारी माँ नही पटरानी बनकर रहना
चाहती हूँ।"

यह सुन दोनो राजकुमार वहाँ एक पल भी खडे नही
रह सके। रानी के मन में पाप की छाया मंडराने लगी।

ई माता का वह रूप, जो अब कलंकित हो चुका था, ,खकर वे दोनो वहाँ से बिना कुछ कहे जाने लगे।

रानी ने जब देखा कि इन दोनों पर मेरी बातों का भाव नही हुआ और ये तो जा रहे है तब वह उठी और ौड़कर दोनो के समक्ष खड़ी हो, कहने लगी—

"नही राजकुमार! तुम तो अब मेरे सपनो के राज-ुमार बन गये हो! इस प्रकार मैं तुम्हे नही जाने दूँगी ? ुम्हें मेरी बात माननी ही होगी।"

और वह राजकुमार के पैरों में गिर गई।

राजकुमार वीरभान ने कहा—

"यह क्या करती हो माताजी! तुम्हे तनिक भी लज्जा ही आती ? क्यो हमारा अपमान कर रही हो ?"

"अपमान नही, मैं तो तुम्हारे चरणो की दासी हूँ। मुझे मत ठुकराओ।"

और दोनो कुमार अपना पैर छुड़ा वहाँ से चल दिये। रानी उन्हे जाते देखते रही। फिर वह उठी और सोचने लगी—'ठीक है कुमार! आज नही तो कल मैं तुम्हें पाकर ही रहूँगी। तुम्हें मेरे मोह-जाल में फँसना ही होगा।'



फुंकारने लगी। वह सोचने लगी कि 'ये दोनो तो मेरे मोह-जाल में नहीं फँसे और भाग निकले। कहीं ऐसा न हो कि ये दोनों इस बात की चर्चा कर दें। अगर महाराज को पता चल गया तो.......मेरी सारी इज्जत धूल में मिल जावेगी और मुझे जो मान-सम्मान मिला है वह भी जाता रहेगा।' अपनी पोल खुलने के भय से वह घबरा उठी। वह अपने कुकर्म को छुपाने के लिए उपाय सोचने लगी। सोचा कि पानी से पूर्व पाल बाँधना ही उचित है। कही ऐसा न हो कि यह सब सुन महाराज का क्रोध मुझ पर फूट पड़े। ऐसा विचार कर रानी ने तत्काल ही नया जाल फैलाया।

दुनिया में बहुत से ऐसे स्वार्थी लोग है जो अपना स्वार्थ पूरा न होने पर अपने अपराध को छुपाते है अथवा दूसरो के सिर पर थोप देते है। और यही कारण है कि निरपराध व्यक्ति ऐसे स्वार्थी और पापी लोगों के जाल में फँसकर दुःख उठाते है। अपना स्वार्थ पूरा न होते देख रानी मधुलता ने शरीर पर पहने कपड़े अस्त-व्यस्त कर लिये, केश बिखेर लिये, चेहरे को नोच, चिल्लाने लगी—

"दौड़ो दौड़ो.......बचाओ। इन कुमारो को पकडो ये मेरा शील भंग करने यहाँ आये थे।"

दुश्चरित्र होते हुए भी रानी सती बनकर विलाप करने लगी। आवाज सुनकर राजा वीरधवल वहाँ आ पहुँचे तथा पहरेदार और मन्त्री भी पहुँच गये। राजा वीरधवल ने

नी के अस्त-व्यस्त कपड़ो और चेहरे की ओर देखा तो
ा—

"महारानी ! क्या बात है ?"

रानी और भी जोर-जोर से रोने लगी। अपने पाप को
ाने के लिए सफल अभिनय करने लगी।

रानी को रोते हुए देखा तो पुनः पूछा—

"देवी ! हमें भी तो बताओ कि तुम्हारे साथ कौन-सी
टना घटी जो तुम इतनी दुःखी हो ?"

"क्या कहूँ महाराज ! कहते शर्म आती है।"

"नही नही मुझसे कहो, क्या बात है ?"

"मेरा चुप रहना ही उचित है। अगर सभी जान गये
ो हमारा बड़ा अपमान होगा, कुल की मर्यादा सारी मिट्टी
मिल जावेगी।"

अब महाराज और भी अधीर हो उठे। वे रानी के
मीप आकर बोले—

"रानी ! तुम सच-सच निर्भीक होकर मुझे सारी घटना
ुनाओ कि तुम्हारे साथ क्या हुआ। मैं वचन देता हूँ कि
ापराधी को अवश्य दण्ड दूँगा।"

दण्ड देने की बात सुनकर रानी मन ही मन प्रसन्न
ुई। फिर अभिनय कर रोती हुई बोली—

"महाराज ! दोनो कुमार........।"

"हाँ-हाँ बोलो, क्या किया कुमारो ने ?"

"वे यहाँ मेरा शील भंग करने आये थे।"

"नही महारानी ! यह तुम क्या कह रही हो ?" रा आश्चर्यचकित हो दो कदम पीछे हट गये और रानी चेहरे को निरन्तर देखते रहे। उन्हें विश्वास ही नही हु कि जो कुछ महारानी कह रही है, वह सत्य है।

रानी ने कहा—

"महाराज! गेंद लेने के बहाने वीरभान और उदयभा मेरे कक्ष में आये। मुझे देख उनके मन में पाप उत्पन्न गया और वासनान्ध होकर मुझसे कहने लगे कि तु हमारी माँ नही हो बल्कि हमारी रानी हो। आओ, हमा साथ काम-क्रीड़ा में रत हो जाओ। वे मेरी इज्जत लूट पर आतुर हो गये। मैंने साहस करके दोनों को भगा दि और मैंने अपने शील की रक्षा की।"

"ओह.......राजकुमारों ने क्या किया।"

"महाराज आप और आपके लाल सुखी रहें, मैं यह चाहती हूँ। मुझे यहाँ नही रहना। मुझे अपने पिता के घ भेज दीजिए। मैं अपने जीवन के शेष दिन गुजार लूँगी। यह कहकर रानी पुनः विलाप करने लगी।

राजा, मन्त्री तथा पहरेदार सभी आश्चर्यचकि थे। उन्हें कुमारों की करतूत बड़ी विचित्र लगी। अ राजा के क्रोध की सीमा न रही। चेहरे पर कठोरता छ गई। चेहरा लाल हो गया। हाथ तलवार की मूठ प चला गया। राजा ने कहा—

"दुष्ट, पापी, मैं दोनो कुमारो को आज ही मौत के ट उतार दूँगा । ऐसी सन्तान से तो निःसन्तान ही क हूँ ।"

"नही-नही, महाराज, उन्हें न मारिये । आप तो मुझे मेरे पिता के यहाँ पहुँचा देवे ।"

"नही, देवी ! आप यही रहेगी । मैं कुमारों को अवश्य दण्ड दूँगा ।"

रानी ने उचित अवसर देखकर कहा—

"महाराज ! आप अपने हाथो से कुमारो की हत्या न रे । आप यदि मुझे यहाँ रखना चाहे तो दोनो कुमारों ा सिर कटवाकर मेरे हाथो में सौप दें तभी मेरे मन को ांति प्राप्त होगी । ऐसी सन्तान का जो कुल की मान-र्यादा पर ही घात करे, मर जाना ही अच्छा है ।"

"महारानी ! तुम्हारी अभिलाषा अवश्य पूर्ण होगी । कुमारो का सिर कटवाकर तुम्हें सौप दूँगा ।"

और राजा क्रोध मे लीन रानी के कक्ष से बाहर चले ये । मन्त्री एवं पहरेदार जो कि वहाँ उपस्थित थे वार्ता-ाप सुन आश्चर्यचकित थे । उन्हे तो अब भी विश्वास ा नही आ रहा था कि यह घटना सत्य हो सकती है । वे ो राजकुमारो को भली-भाँति जानते है । उनका विश्वास ा कि राजकुमार ऐसा कुकृत्य कर ही नही सकते ।

किन्तु होनी को कैसे टाला जा सकता है ? राजा वीर-ावल ने पुनः विवाह कर बड़ी भूल की । सच है, इस पक्की

आयु और अपने पुत्रों की भलाई के लिए दूसरा विव
वह भी ऐसी दुश्चरित्र स्त्री से जो कि कुल की मान-मर्या
छोड़ दे, ठीक नही। इसमें व्यक्ति का जीवन नरक बन जा
है, वह खुद की ही हानि कर बैठता है।

दूसरे दिन सभा खचाखच भरी थी। यह घटना ह
की भाँति पूरे नगर में फैल गई थी। मन्त्री, सामन्त त
अन्य दरबारी सभी सभा में उपस्थित हो गये थे।

महाराज ने सुमतिचन्द्र मन्त्री से कहा—

"मन्त्रीवर ! हमारे कुल में ऐसी शर्मनाक घटना घ
है जो कभी नही घटी थी। हमें बड़ा दुःख है कि महारा
मधुलता, जो कि वीरभान और उदयभान की माँ भी है,
साथ उनके ही पुत्रों द्वारा अन्याय की कोशिश की गई, रा
पर कुदृष्टि डाली गई। यह बात हम तथा हमारा न्य
सहन नही कर सकते।"

मन्त्री सुमतिचन्द्र ने कहा—

"महाराज ! बात तो बडी चिन्ताजनक और शर्मना
है, किन्तु आप इस घटना को बडी गम्भीरता से लीजिए
क्या सचमुच राजकुमारों ने महारानी के साथ यह अन्या
किया ?"

"मन्त्रीवर ! महारानी हमसे झूठ नही कह सकती अ
वह भी ऐसा झूठ जो हमारी मान-मर्यादा को मिट्टी
मिला दे।"

"महाराज़ ! आप व्यर्थ उत्तेजित हो रहे हैं। मे

विश्वास है कि दोनों कुमारो मे से कोई भी ऐसा दुस्साहस नही कर सकता।"

"नही, इन दोनो के कारण ही आज महारानी का अपमान हुआ है। हमें तो इस बात की शर्म महसूस हो रही है कि हमारे रहते हुए तथा तुम्हारी शिक्षा और देख-रेख के पश्चात भी ऐसी घटना घटी।"

"अच्छा होगा यदि आप दोनों कुमारो को यहाँ बुल-ाकर सत्यता जान लेवे।"

"सत्य यही है कि वे दोनो अपराधी है और अपराधी को दण्ड मिलना ही चाहिये।"

कुछ देर तक सोचने के बाद राजा ने पुनः कहा—

"हमारा आदेश है कि दोनो राजकुमारों का सिर काटकर ले आओ और महारानी के हाथ में सौप दो।"

"महाराज ·······!"

सभा में हलचल मच गई। कानाफूसी होने लगी। महा-राज का यह आदेश सभी के लिए आश्चर्यजनक था। मन्त्री सुमतिचन्द्र भी महाराज के कठोर आदेश को सुन विचलित हो गया। महाराज को समझाते हुए वह बोला—

"महाराज ! धीरज धारें। कोई भी कार्य करने से पूर्व आप भली-भाँति जाँच कर लेवे। केवल महारानी की बाते सुनकर शंका का समाधान नही हो सकता।"

"शंका का प्रश्न ही नही उठता। हमने बताया न
कि महारानी हमसे असत्य नही कह सकती।"

"महाराज ! फिर भी आप दोनो कुमारो को यहाँ उप
स्थित कर पूछ लेवें तो उचित ही होगा। यदि आप बगै
जाँच पड़ताल किए कुमारो को दण्ड दे देगे तो उचित नहीं
होगा। हो सकता है कि बाद में पश्चाताप करना पड़े
जिस प्रकार बिना शाखा के पेड़ की शोभा नही होती उसी
प्रकार बिना पुत्रों के राजा की भी शोभा नही होती। दोनों
कुमार तो आपके दाहिने और बॉये हाथ है। यदि सन्तान
नहीं होगी तो आपका वंश किस प्रकार आगे बढ़ेगा।"

मन्त्री ने महाराज को समझाते हुए पुनः कहा—

"कुमार तो आपकी भुजा है और यदि आपकी भुजा
ही टूट जावेगी तो आप किस प्रकार अपना जीवन व्यतीत
कर सकेंगे ? महाराज अपना विवेक न खोवें। घटना की
पूर्ण जानकारी प्राप्त करें। यदि वास्तव में कुमार दोषी
हों तो उन्हें दण्ड देवें किन्तु दण्ड भी ऐसा कि जिससे सांप
भी मर जावे और लाठी भी न टूटे।"

"मन्त्रीवर ! तुम्हारी सलाह उचित ही है। हम तुम्हारी
बुद्धि पर गर्व करते है और तुम पर विश्वास भी करते है
किन्तु महारानी पर अविश्वास भी तो नही कर सकते।"

"तभी तो मैं कहता हूँ कि दोनों पक्षो को भली-भाँति
सुन लेवे पश्चात निर्णय दे।"

"मन्त्रीवर ! हमने सोच लिया। हमारा आदेश यहीं है
कि दोनों के सिर काटकर रानी को सौप दिये जावे।"

और राजा सभा से उठकर चले गये।

कहा जाता है कि राजा, योगी और दानव इनकी ल्टी ही रीति है। ये खुश होने पर किसी को भी माला-ाल कर देते है और रुष्ट होने पर सर्वस्व छीन लेते हैं। न्त्री ने विचार किया कि 'महाराज की बुद्धि पर तो हारानी मधुलता के रूप-यौवन का पर्दा पडा हुआ है, वे ोह-जाल मे बुरी तरह से फँस गये हैं और अपना विवेक ो खो बैठे है, उन्हें कैसे समझाया जावे कि जो आप कर हे है, वह अनुचित है। मन्त्री वहाँ से विचार करता हुआ त्काल चल पडा—'जिन हाथों से मैंने कुमारो को पाला-ोसा, खिलाया-पिलाया उन्ही हाथो से मैं किस प्रकार नका सिर काट लूँ। साथ ही आज्ञा का पालन करना भी रूरी है अन्यथा संकट मुझ पर भी आ खड़ा होगा। या किया जावे और क्या नही?' इन्ही विचारो में वह ँवर आवास में पहुँच गया। मन्त्री सुमतिचन्द्र को अपने ास आते देख दोनो कुमार उठ खड़े हुए और स्वागत के लिए आगे बढ़ गये। मन्त्री उन्हें अपने साथ ले दूसरे कक्ष ें प्रविष्ट हुआ। तीनो बैठ गये। तभी वीरभान ने मन्त्री े कहा—

"कृपा तो है? आपने यहाँ आने का कैसे कष्ट किया?"

"राजकुमार! बड़ी ही विकट समस्या में फँस गया हूँ।"

"कहिये, क्या बात है?"

"मैंने तुम दोनों को बचपन से ही पाला-पोसा है, अपने हाथों से खिलाया है तुम्हें। मुझे तुम दोनो पर बड़ा गर्व है और विश्वास है किन्तु समझ में नही आता कि······ कि महारानी ने तुम पर यह आरोप क्यो लगाया?"

कुमारो को महाराज के आदेश का पता चल गया
वे मन्त्री सुमतिचन्द्र से बोले—

"महारानी हमारी माँ है और हमने सदा ही उ
आदर किया। समझ में नहीं आता महारानो हमसे
व्यवहार कर किस जन्म का बदला ले रही है ?"

"कुमार ! मुझे सारी घटना सुनाओ।"

"सत्य तो यह है कि हम कुछ मित्र गेंद खेल रहे
हमारी गेंद रानी के कक्ष में जा पहुँची। हम अपनी गेंद
वहाँ पहुँचे। उनके मन में दुर्भावना ने जन्म लिय
वह अपने साथ हमें राग-रंग में डूबने और कुकृत्य के
तत्पर हो गई। यह भी नहीं सोचा कि हम उनके पुत्र
महारानी चरित्रहीन है वह हमारी माँ कहलाने की अ
कारिणी नही। हम वहाँ से चल दिये। हमें विश्वास था
वह कोई प्रपंच अवश्य खड़ा करेगी। और यही हुआ।
सारा जाल उन्ही का फैलाया है। इसमे हमारा कोई व
नहीं।"

मन्त्री सुमतिचन्द्र राजकुमारो के चरित्र की मन ही
सराहना करते हुए बोला—

"मैं जानता हूँ कि तुम्हारा कोई कसूर नही कि
महाराज को कौन समझावे ? वे तो महारानी का ही व
सत्य मान बैठे। महारानी के रूप का जादू उसके सिर
चढ़कर बोल रहा है। महारानी को पतिव्रता ज
तुम्हारा सिर काटने का मुझे आदेश दे बैठे।" कह
सुमतिचन्द्र बड़ा दुःखी हुआ।

ा दोनो कुमारो को आश्चर्य तो था ही किन्तु वे शान्त
व से बैठे थे । वे सोच रहे थे कि 'चोर कोतवाल को डाटे'
ी उक्ति आज चरितार्थ हो गई । अपराध महारानी ने
या और दण्ड हम भोगे ।

पापी कई पाप करते है और अपना स्वार्थ पूरा न होने
दूसरों के सिर अपना पाप मढ देते है किन्तु सच तो
। ही रहता है । "सांच को आंच नही" । अन्त में जीत
सत्य की ही होती है । देर अवश्य हो जाती है किन्तु
घेर नही । दुःख और सुख ये सभी अपने-अपने कर्मों के
धार पर उदय होते है और इनका अन्त भी होता है ।
न्तु यदि कोई किसी के फैलाये जाल में फँस जाता है
हे वह निरपराधी हो तो भी अन्त में उसी की जीत
ती है क्योकि उसने कोई अपराध नही किया । मानव-
वन वडा सघर्षपूर्ण जीवन है । इसमें कदम-कदम पर
ख और संघर्ष है, एक चुनौती है किन्तु इसे साहस के साथ
। स्वीकार कर ले और सामना करे वही पुरुष, वीर पुरुष
हलाता है ।

मन्त्री सुमतिचन्द्र दोनो कुमारो से सही घटना जान-
र बहुत प्रसन्न हुआ । वह जानता था कि कुमार अवश्य
रपराधी है । अव राजा के आदेश का पालन किस प्रकार
या जावे ? ऐसी कोई युक्ति हो जिससे राजाज्ञा भी पूर्ण
और राजकुमार भी बच जावे । इन्ही बातो पर विचार
रते-करते दिन ढल गया । □

४

रात्रि का प्रथम पहर। राजकुमार और मन्त्री
विचार कर रहे है। मन्त्री ने सोचा कि 'यदि मैं घटना
पूर्ण जानकारी और दुश्चरित्र महारानी की सारी कर
महाराज से जाकर बयान कर दूँ तो तूफान खड़ा
जायेगा और अगर वास्तविक घटना से महाराज अन
रहे तो महारानी की करतूत और बढ़ेगी। आज यह घ
घर में हुई, कल हो सकता है बाहर भी घटित हो।
क्या महाराज की इज्जत पर प्रहार न होगा ? क्या
की बदनामी न होगी ? कौन गर्व करेगा राज्य पर ?
विश्वास करेगा महाराज पर ? और फिर इन कुमा
का क्या दोष जो इन्हे अपनी जान से हाथ धोना
रहा है। इन्हें कैसे बचाया जाय ?' यही विचार कर
करते मन्त्री सुमतिचन्द्र के मस्तिष्क में एक युक्ति आती
और चेहरे पर प्रसन्नता छलकने लगती है। वह कुमारो
कहता है—

"वीरभान और उदयभान !"

"जी मन्त्रीवर !"

"तुम दोनो निरपराध हो और मैं चाहता हूँ कि
दोनों दण्ड के भागीदार न हो। इसके लिए तुम्हें मेरी ब
माननी पड़ेगी।"

"आप ही ने हमें बचपन से आज्ञापालन की शिक्षा है। हम आपका आदर करते है। भला, आपकी आज्ञा अवहेलना कैसे कर सकते है ?"

"मुझे तुमसे यही उम्मीद थी।"

"आप आदेश दें, हमे क्या करना है।"

"तुम दोनों यहाँ से विदेश के लिए तैयारी करो।"

"यह क्या·······हम और विदेश जावे ?"

"हाँ, तुम्हारे बचने का अब यही एक तरीका है।"

"किन्तु महाराज········?"

"महाराज को मैं सब समझा दूँगा।"

"क्या आप महाराज को यह बतलाएँगे कि हमारी माँ हमारे साथ क्या व्यवहार किया ?"

"नही, यह बात तो मैं अभी महाराज से नही गा।"

"तो फिर महाराज की आज्ञा का पालन आप किस ार करेंगे ?"

"उसके लिए कोई-न-कोई उपाय सूझ ही जायेगा। केन अभी तो तुम दोनो यहाँ से प्रस्थान के लिए तैयारी ो। रात्रि में ही तुम यहाँ से निकल जाओ। किसी को नो-कान खबर ही नही होगी। बाद में जो होगा, मैं सब पट लूँगा।"

"कही आप पर विपत्ति आ गई तो ?"

"मैंने कहा न, कि मैं सारी स्थिति का सामना
लूँगा।"

राजकुमार नही चाहते थे कि मन्त्री को विपा
फँसाकर अपनी जान बचाई जाये किन्तु मन्त्री सुमति
जो उन्हें सन्तान से अधिक स्नेह करते थे, उनकी
का पालन करना भी तो आवश्यक हो गया था। अतः
ने भारी मन से विदेश जाने की हाँ कर दी।

मन्त्री सुमतिचन्द्र रातों-रात राजकुमारों को
महल से निकल पड़ा। कुछ दूर साथ ले गया। चलने से
मन्त्री ने राजकुमारो को कई रत्न-जड़ित आभूषण
वस्त्र दिये और सवारी के लिए घोड़े भी। जाते समय मा
मन्त्री राजकुमारों को बहुत सी शिक्षा-प्रद बातें समझ
रहा।

रात आधी बीत गई थी। चारों ओर गहन अन्ध
फैला था। पशु-पक्षी, मनुष्य, पेड़-पौधे यहाँ तक कि
राज्य निद्रा मे लीन था। चारों ओर सन्नाटा फैला
और मन्त्री दोनो राजकुमारों को लेकर कुछ दूर
विदा करने के लिए जा रहा था। नगर से कुछ दूर ज
एक स्थान पर मन्त्री रुक गया और राजकुमारो से बोल

"कुमारो ! अब जाओ, धर्म तुम्हारी रक्षा करेगा।
शिक्षाएँ मैंने तुम्हें दी, उनको याद रखना। धर्म और
का पालन ही हमें शक्ति देता है और यही शक्ति हमें
में विजय दिलाती है। तुम दोनो सुखी रहो, यही
आशीष है।"

। मन्त्री की आँखो में अश्रु देख राजकुमार भाव विह्वल उठे। उनकी भी आँखों में आँसू आ गये। दोनों मन्त्री को प्रणाम किया। तब मन्त्री सुमतिचन्द्र ने पुनः ा—

"मेरी दी हुई सीख को याद रखना। सुख हो या दुःख 'नवकार' मन्त्र को कभी भी मत भूलना। यह सर्व-ष्ठ मन्त्र है। जिस प्रकार फूलो मे गुलाब और निशा में तारो में श्रेष्ठ प्रकाश चन्द्र का होता है ठीक उसी कार नवकार मन्त्र सर्वश्रेष्ठ है। जब कभी तुम विपत्ति में ो या तुम्हे चिन्ता सतावे, तुम देव, गुरु व धर्म में अपना ान लगाना और नवकार मन्त्र का जाप करना यह म्हारा कल्याण करेगा।"

दोनो राजकुमार भारी मन से चल दिये। राजकुमारों ो दूर जाते हुए मन्त्री देखता रहा और सोचता रहा—'कैसी डम्बना है जो निरपराध हैं वह चल पड़े भटकने के लिए, ष्ट उठाने के लिए और जो वास्तव में अपराधी है वह हलो में सुख की सेज पर विश्राम पा रहा है। वाह रे धाता, तेरे भी खेल ! किसी को तो फूल मिलते है और किसी ो काटे। न जाने ये कुमार कब तक यूँ ही भटकते रहेगे ?' ब दोनो कुमार दृष्टि से ओझल हो गये तब मन्त्री वापस हल की ओर चल पडा। अब उसके सामने वडी ही कट समस्या थी। एक चुनौती थी, एक संकट था और ह था—महाराज वीरधवल की आज्ञा का पालन। सुबह ोते ही महाराज पूछेंगे कि दोनों का सिर काट महारानी

के पास पहुँचा दिया तो मैं क्या जवाब दूँगा ? जब
पता चलेगा कि कुमार राज्य में नहीं है तो क्या होगा ?
इतने दिनों की राज्यभक्ति, सेवा और विश्वास सब
मे नही मिल जायेगा ? जब महाराज को पता चलेगा
मैंने ही दोनों को राज्य से बाहर भेज दिया। तब मैं
प्रकार राजा की आज्ञा का पालन करूँ ? यही सोचे
सोचते रात्रि के अन्धकार में मन्त्री सुमतिचन्द्र महल
ओर बढ़ता गया।

५

वीरभान और उदयभान रात्रि के सन्नाटे में घोड़े
सवार चले जा रहे थे। मार्ग में इधर-उधर कभी हि
दिखाई देते तो कभी सियार। कभी-कभी दूर से रात
सन्नाटे में सिंह की भयानक गर्जना भी सुनाई देती तो क
पेड़ों की टहनियों पर लटके विशालकाय सर्प फुंका
उठते। कही-कही हाथियो का झुण्ड भी चिघाड़ता दिखा
देता ? अंधकार में डूबे मार्ग के दोनो ओर ऊँचे-ऊँचे पे
निश्चल खड़े थे मानो कोई दानव आकर खड़े हो गये हो
किन्तु दोनों वीर भयरहित हो आगे बढ़ते ही चले गये।

रात्रि का अन्धकार धीरे-धीरे छँटने लगा। पूर्व दिश
में लाली छा गई। पक्षी चहचहाने लगे। आकाश का सुनहर

ग दोनों भाइयो को अच्छा लगा। कुछ देर बाद सूर्योदय आ। अब चारों ओर प्रकाश फैल गया था। सूर्य की किरणे चाँदी के समान चमक रही थी। आसमान में चारो ओर बादलो के छोटे-छोटे रूई के समान गोले उडते से दिखाई दे रहे थे। दोनो प्रसन्न मुद्रा में चले जा रहे थे। चारों ओर दूर-दूर तक फैला वन दिखाई दे रहा था। ऊँचे-ऊँचे वृक्ष खड़े थे। कही-कही छोटी पहाड़ियाँ भी दिखाई दे रही थी। कुमारो को प्यास लगी। पानी के अभाव में उनका गला सूख रहा था। घोड़े भी सारी रात भागते ही रहे थे। प्रातः होते-होते वे भी थककर भूख और प्यास से व्याकुल हो उठे। पानी की तलाश में दोनों वीर इधर-उधर देखने लगे। कुछ दूर चलने पर उन्हें एक सुन्दर तालाब दिखाई दिया। जिसके तीन ओर वृक्ष खडे थे। दोनों कुमार शीघ्र तालाब के निकट पहुँचे। घोड़ो से नीचे उतर कर पहले घोड़ो को पानी पिलाने लगे। किन्तु भाग्य की विडम्बना ! विषयुक्त जल ! दोनो घोडे छटपटाने लगे और कुछ ही देर बाद दोनो घोड़ों ने तड़पते हुए दम तोड़ दिया।

प्रकृति भी कभी-कभी मानव से रूठ जाती है तब मानव का जीवन बड़ा कष्टमय हो जाता है। ऐसे समय वह जो भी कार्य करता है उसका परिणाम विपरीत ही निकलता है। यश के स्थान पर अपयश ही प्राप्त होता है। मनुष्य सोचता क्या है और होता क्या है ? किसी के हाथ में भी तो नही होता कि भाग्य की रेखा को मिटा दे और अपनी इच्छानुसार फिर लिख दे। एक बार कर्म के आधार पर

भाग्य में जो लिख जाता है वह अमिट हो जाता है और जि
जीवन में प्रकृति भी मानव की परीक्षा ही लेती है। क
प्रकार के संकटों से मानव को गुजरना पड़ता है। यह
हाल दोनों कुमारो का था। वे अकारण कष्ट उठाये जा र
थे। उन्हें क्या पता था कि तालाव का जल विषमय है नं
तो वे घोड़ों को वहाँ पानी ही क्यो पिलाते ? किन्तु ऐ
होना था सो हुआ। अब दोनो कुमारों की दशा बड़ी द
नीय हो गई थी। एक तो जंगल का मामला और उस प
घोड़ों का प्राणान्त हो जाना अव बिना घोड़ों के भूखे-प्या
आगे वढना भी तो आसान नही था। दोनों भाई अप
मृत घोड़ों के निकट व्याकुल और दुःखी होकर वैठ गये
उनकी आँखों से आँसू वहने लगे। घोड़े भी पूर्णतः स्वा
भक्त थे। ऐसे घोड़ों का बिछुडना कुमारो के लिए असहन
था किन्तु अब क्या शेष था ? कभी-कभी मनुष्य पशुओ
अधिक विश्वास रखने लगता और उससे प्रेम करने लगता
ऐसे सुन्दर और स्वामिभक्त अश्वों के खोने के दुःख में आँसु
का वहना स्वाभाविक ही है। किन्तु यह तो विधाता
खेल है जो आजीवन चलता ही रहता है—कभी सुख
कभी दुःख, कभी धूप तो कभी छाँव। मनुष्य, यहाँ तक
भूतल की प्रत्येक वस्तु प्रकृति का खिलौना है जिनसे वह
भाँति-भाँति के खेल खेलती रहती है। यही खेल दोनों
राजकुमारों के साथ भी खेला जा रहा था। उनके लिए
यह समय परीक्षा का था और ऐसे समय में उनके लिए
फूल भी काँटे बन गये थे। संकट की रातें मँड़रा रही थीं।
सुख के दिन अभी दूर थे।

बड़ा भाई वीरभान उठा और अपने छोटे भाई उदय-भान के सिर पर हाथ रखकर बोला—

"उठो भाई ! अब निराश होने से क्या लाभ ? हमें अभी और आगे चलना है। यदि तुम अभी से हिम्मत हार बैठोगे तो आगे क्या होगा?"

उदयभान अश्रुपूर्ण नेत्रों से बड़े भाई की ओर देखते हुए बोला—

"भैया ! अब क्या होगा ? हमारे अश्व तो जाते रहे। हम अब कैसे अपना मार्ग तय करेंगे ?"

"हमारे अश्व नही रहे तो क्या, हमारे पैर तो अभी सशक्त है। हम हिम्मत से आगे की ओर बढ़ते रहेंगे। हमें आशा नही छोडनी चाहिये।"

"क्या हमारे ही भाग्य में इतना कष्ट लिखा है ?"

'भाई ! विधाता का लिखा कौन टाल सकता है ?"

"विधाता ने हमारे जीवन मे इतने कष्ट क्यो भर दिये ? क्या इसलिए कि हमने एक दयावान और न्यायप्रिय राजा के घर जन्म लिया…… …?"

बीच मे बात को काटते हुए वीरभान ने कहा—

"हमारे पिता अर्थात् राजा वीरधवल अब न्यायप्रिय कहाँ रहे ? उनकी न्यायप्रियता और विवेक तो रूप-सौन्दर्य के नीचे दब गये है।"

"तो क्या इसलिए हम कष्ट उठा रहे है भैया ! कि हमने बड़ो का आदर करना सीखा ? क्या इसलिए कि हमने

अपनी विमाता को रानी माँ के तुल्य समझा ? क्यो भैया! हमें ये दुःख क्यो देखने पड़ रहे हैं ? क्यों हम अपना घर छोडकर इस वन में भटक रहे है ?" और उदयभान रोने लगा।

वीरभान ने दोनो हाथो से उदयभान को स्नेह से खड़ा किया, उसके आँसू पोछे, धीरज वँधाया और वोला—

"यह हमारी परीक्षा की घड़ी है। हमें हिम्मत नहीं हारना है। देखना, अन्त में जीत हमारी ही होगी। क्योंकि सत्य ही हमेशा विजयी रहा है। दुनिया के सुख-दुःख तो क्षणिक है जो सुवह-शाम घटते-वढ़ते रहते हैं। हमें अव आगे वढना है। आओ, हम चले। अभी रात है तो कभी दिन भी सूर्य के रूप में चमकेंगे।"

दोनों भाइयों ने मन्त्री सुमतिचन्द्र द्वारा दिये आभूषण और वस्त्रों की गठरी उठाई और चल पड़े। यह संसार ही बड़ा विचित्र है। यहाँ पर सज्जन पुरुषों के जीवन की कसौटी एक वार नहीं अनेको वार होती है। इतिहास साक्षी कि यहाँ पर संत-सतियों और कई महापुरुषों को कसौटी .र कसा गया। राजा नल और दमयन्ती को भी तो इस दुनिया में कई संकट झेलने पड़े थे। राजा हरिश्चन्द्र और तारामती ने भी तो अनेक कष्ट सहे हैं। राजा हरिश्चन्द्र को तो यहाँ तक परीक्षा ली गई कि उन्हें स्वयं को चाण्डाल के घर विकना पडा और महारानी तारा को एक वेश्या के घर ठहरना पड़ा। ये महापुरुष धैर्य के साथ अपने जीवन की परीक्षा देते रहे और अन्त में इतिहास में अमर हो गये।

यह सत्य है कि अन्तिम विजय उन्ही की होती है जो साहसपूर्वक धैर्य के साथ हर कष्ट सह लेते है।

वीरभान और उदयभान भी साहस के साथ अपना मार्ग तय कर रहे थे। विकट जंगल। दूर-दूर तक कोई भी मानव नही दिखाई दे रहा था। चलते-चलते दोनो एक पेड़ के नीचे से गुजर ही रहे थे कि अचानक पेड़ के पीछे से आवाज सुनाई दी—

"खबरदार, ठहरो।"

दोनो कुमारो के कदम वही रुक गये। निगाहे आवाज की ओर उठ गईं। इतने मे एक व्यक्ति पेड के पीछे से बाहर की ओर निकला। उसने अपने दूसरे साथियो को इशारा किया जो अन्य पेड़ो के पीछे खडे थे। वे सभी घेरा डाल कर खडे हो गये। कुमारो ने तब उन्हे देखा—शक्ल और सूरत से डरावने लग रहे थे, बड़ी-बड़ी मूँछे, उलझे से बाल। काले कपड़े पहने और हाथ मे तलवार लिये वे किसी दानव से कम नही लग रहे थे। ये सभी लुटेरे थे जो राहगीरो को लूटते थे।

"तुम लोग कौन हो और कहाँ जा रहे हो ?"

एक लुटेरे ने दोनो भाइयों से सवाल किया। तब दोनो भाइयो ने एक दूसरे की ओर देखा।

"सुना नही तुमने ?"

"हाँ सुन लिया।"

"तब बताओ कि तुम लोग कौन हो ?"

"राहगीर !"

"वह तो हम भी जानते है। कहाँ जा रहे हो?"

"अभी तो हम स्वयं भी नहीं जानते कि कहाँ ज रहे हैं।"

उत्तर सुनकर लुटेरे ने अपने साथी से कहा--

"देखा, कितने मासूम और भोले बन रहे है।"

फिर कुमारो की ओर देखते हुए कहा—

"चेहरे से तो तुम किसी रईस घराने के लगते हो?"

फिर उनकी नजर गठरी पर रुक गई जिसमें वस् और आभूषण बँधे थे।

"क्या है इसमें?"

"पहनने के वस्त्र।"

"खोलो इसे।"

दोनों भाई समझ गये थे कि अब इन आभूषणो क बचाना मुश्किल है। ये व्यक्ति हमसे अवश्य ही सब कुछ छी लेगे। यह सब माया का ही चक्कर है। सब धन का खे है। इसी के लिए ये सभी अपना घर त्याग कर इस विक और बीहड जंगल में घूमते फिर रहे है। यह धन कभी-कभी भारी संकट में डाल देता है।

"सुना नही? हमने कहा है, खोलो इसे।"

तब वीरभान ने वह गठरी खोल दी। जगमगाते आभू षण और बहुमूल्य वस्त्रो को देखकर लुटेरों की आँखें प्रसन्नता से चमक उठी। लुटेरो ने इस प्रकार के कीमती

ाभूषण और वह भी इतनी मात्रा में पहले कभी नही
ेखे थे।

"यह सारा माल हमें दे दो और तुम यहाँ से भाग
ाओ अन्यथा तुम्हें मार दिया जायेगा।"

जब भाग्य ही रूठ जाता है तब मनुष्य क्या कर
कता है। दोनों भाइयो ने कोई विरोध नही किया। विरोध
रना भी व्यर्थ था। दोनो भाइयो को किसी भी प्रकार
फलता नही मिलती। सारा धन वही छोड़कर दोनों भाई
ुपचाप आगे की ओर बढ़ गये। लुटेरों ने वह सारा माल
ठा लिया और तेजी से पेड़ो की आड़ में छुपते चले
ये।

माल गया किन्तु जीवन बच गया, क्या यह कम नही
? धन पाने का लालच करना धन के पोछे दीवाने बन
ाना पाप का कारण बन जाता है। यह धन शरीर का
ाश करता है और अन्त में शरीर मृत्यु को प्राप्त होता है।
न के कारण ही व्यक्ति सारा जीवन भटकता रहता है।
कभी-कभी धन कई बुराइयों को जन्म देता है। वह मनुष्य
की बुद्धि और विवेक को हर लेता है अत. धन के लिए
लालच करना व्यर्थ है। दोनो भाई बच गये, यह उनका
सौभाग्य था। यही विचार करते-करते दोनों आगे की ओर
चलते गये। शायद यह अशुभ कर्मों का ही फल होगा
तभी तो उनके पास इस विकट जंगल में कुछ भी शेष नही
रहा। फिर भी वे हिम्मत करते हुए आगे की ओर बढ़ते
रहे। अब भूख उन्हे सताने लगी थी, प्यास के कारण

उनका गला सूखा जा रहा था किन्तु अभी तक ऐसा स्था
नहीं आया जहाँ ये दोनों ठहर सकें और पेट की आग बुझ
सकें। भूख-प्यास से व्याकुल दोनों को चलते-चलते सूर्यास्त
हो गया। कुछ दूर चलने के पश्चात उन्हें पानी बहने की
आवाज सुनाई दी। उनके चेहरे पर खुशी प्रकट हो गई
आतुरता से और आगे बढ़े। उन्हे एक छोटा झरना
झरता दिखाई दिया। दोनों भाइयों ने जब पानी को छूआ
उन्हें अपूर्व आनन्द की प्राप्ति हुई। उन्होंने अपना मुँह धो
और पानी पीकर अपनी प्यास बुझाई। दिन ढल गया, चारों
तरफ अन्धकार ने अपना अस्तित्व फैला दिया। रात्रि में
कहाँ जावे ? दोनों के समक्ष यह समस्या थी। रात्रि विश्राम
के लिए एक घने पेड़ के नीचे थक-हारकर वीरभान और
उदयभान बैठ गये। रात्रि बढ़ती ही गई। कुमारो ने सोने
का प्रयत्न किया किन्तु सो नही पाए। भूख के कारण उन्हें
वैसे भी नीद नही आ रही थी और फिर इस वन में हिंस
पशुओं का भी भय था। फिर भी दोनों कुमार सोने का
प्रयत्न करते रहे और रात गुजरती ही गई।

६

इधर मन्त्री सुमतिचन्द्र दोनों राजकुमारों को छोड़कर
वापस लौट रहा था। वह सोच रहा था—'कुलटा और
दुश्चरित्र रानी के मायाजाल में फँसकर आज दोनो कुमारों

कट झेलना पड़ा।' वह रानी को धिक्कार रहा था।
ैसी विडम्बना है पापी आराम कर रहा और निरपराध
गल में भटक रहे है। महाराज भी रानी के मोह-जाल
ऐसे फँसे कि उन्हें रानी के रूप-सौन्दर्य के अतिरिक्त
छ सूझता ही नही। रानी कहे कि दिन है तो महाराज
ो कहेगे दिन, चाहे वह रात हो। रानी के ही मोह-जाल
फँसकर उसकी बात सही मान बैठे। राजकुमारो का
ार काटने का आदेश दे बैठे। धन्य है दोनों वीर! जो
पने चरित्र पर खरे उतरे; और मुझे सारी घटना सत्य
ह सुनाई।' दोनों भाइयो की सत्यता जानकर वह प्रसन्न
ा और मन ही मन प्रसन्न हो रहा था। मन्त्री को इस
ात की प्रसन्नता थी कि उसने दोनो निरपराधों के प्राणों
ी रक्षा की; नही तो अनर्थ हो जाता। अब महाराज को
ैसे समझाया जावे? उनका तो आदेश है कि दोनो के सिर
ानी को सौप दिये जावे। अब मैं राजकुमारों के सिर
हाँ से लाऊँ? यही विचार करते-करते वापसी के लिए
ौट रहा था। चलते-चलते मन्त्री सुमतिचन्द्र को एक
ुक्ति सूझी। वह महल की ओर न लौटकर, बस्ती की
ोर चल दिया। चारों तरफ अन्धकार था। सन्नाटा
ाया हुआ था। कभी-कभी श्वान के भौकने की आवाज
न्नाटे को चीरकर निकल जाती। फिर शान्ति। रात
ाधी बीत गयी थी।

"खट खट……खट" मन्त्री सुमतिचन्द्र ने एक व्यक्ति
े द्वार को खटखटाया।

अन्दर से आवाज आई—

"कौन"

"मैं हूँ मन्त्री सुमतिचन्द्र !"

द्वार खुला। एक वृद्ध व्यक्ति हाथ में लालटेन
खड़ा था। यह वृद्ध एक महान कलाकार था। जो रा
हितैषी और विश्वसनीय था।

"आओ.....आओ महामन्त्री !" वृद्ध ने कहा—"
चले आओ।"

मन्त्री सुमतिचन्द्र द्वार के भीतर चला गया।

छोटा-सा मकान। जिसमें वृद्ध के अतिरिक्त अन्य
भी नहीं रहता था। कुछ वस्तुएँ इधर-उधर बिखरं
थी। लालटेन का मद्धिम प्रकाश पूरे कमरे में फै
था। एक ओर चारपाई पड़ी थी। वृद्ध ने चारपाई क
इशारा कर मन्त्री से कहा—

"बैठिये।"

मन्त्री सुमतिचन्द्र उस पर बैठ गया। वृद्ध को अ
था कि मन्त्री का इस वक्त मेरे घर आने का क्या प्र
हो सकता है। वह बोला—

"कहिये महामन्त्री ! मैं आपके लिए क्या
सकता हूँ ?"

"पहले तुम आराम से बैठो।"

वृद्ध चारपाई के निकट बैठ गया।

"तुम्हें आश्चर्य तो होगा कि इस वक्त रात्रि
तुम्हारे पास क्यों आया।"

"जी आश्चर्य तो है, शायद मेरे लायक कोई कार्य
ा ?"

"हाँ, तुम्हारे लायक काम पड़ गया।"

"फरमाइये, मैं आपके लिए क्या कार्य कर सकता हूँ ?"

"तुम एक महान कलाकार हो और विश्वासपात्र
। मैं एक विशेष प्रयोजन से तुम्हारे पास आया हूँ।"

वृद्ध के चेहरे पर आश्चर्य एवं घबराहट के मिले-जुले
ों को देखकर मन्त्री ने पुनः कहा—

"घबराओ नहीं, यह तुम्हारे लिए परीक्षा का समय
वैसे तुम्हारे लिए कोई कठिन कार्य नहीं किन्तु मेरे
महत्त्वपूर्ण कार्य है जो तुम्हें करना है।"

"मैं किसी भी कार्य के लिए तत्पर हूँ, आप आज्ञा
जिए।"

"प्रथम तो तुम वचन दो कि जो कुछ मैं करने के लिए
गा उसे तुम गुप्त रखोगे।"

"जी, आपके विश्वास को मैं कैसे तोड़ सकता हूँ।"

"तो तुम्हें आज अपनी कला का प्रदर्शन करना है।
राजकुमार वीरभान और उदयभान के चेहरे अर्थात्
ृम रक्त रंजित सिर बनाना है। इसमें जो भी व्यय
ा वह मैं तुम्हें दूँगा। और हूबहू सिर बनने पर मैं
इनाम भी दिया जावेगा।"

वृद्ध कलाकार हाथ जोड़कर बोला—

"यह तो मेरे लिए कोई कठिन कार्य नहीं किन्तु आप

यह बतावें कि आपको राजकुमारों के सिर बनाक
तक दे दूँ।"

"सूर्योदय के पूर्व।"

"ओह""""यह तो बहुत कम समय है।"

"हाँ समय तो कम है किन्तु इसी समयावधि में
यह कार्य पूर्ण करवाना है।"

चूँकि महारानी मधुलता और राजकुमारों को ले
जो घटना घटी थी। उसकी खबर सारे राज्य में फैल
थी। वृद्ध कलाकार को भी उस घटना का ज्ञान था।
बात उसके समझ में धीरे-धीरे आई। वह मन्त्री की
को मन ही मन सराह रहा था।

"तो ठीक है मैं तत्काल ही इस कार्य में
जाता हूँ।"

"हाँ, और ध्यान रहे राजकुमारों के सिर बिल
उन्हीं के समान दिखने चाहिए। कोई भी पहचान न पावे
ये नकली है। इसका पूरा व्यय मैं तुम्हें दूँगा।"

"आप चिन्ता न करें, कोई भी पहचान न पायेगा।

और वृद्ध कलाकार कार्य में जुट गया। आव
सामान एकत्रित कर वह राजकुमारों के सिर ब
लगा।

इधर सूर्योदय होने को आया और उधर वृद्ध कला
ने पूर्ण लगन और आत्मविश्वास के साथ कार्य पूर्ण
दिया। जड़ी-बूटियाँ और अन्य वस्तुओं से उसने

कुमारो के कटे हुए सिर बना दिये। उनके अन्दर गाढ़ा
रंग भर दिया जो एक-एक बूँद नीचे टपक रहा
। मानो कटे हुए सिर से रक्त की बूँद टपक रही हो।
के ऊपर नकली बाल बना दिये थे जो बिलकुल राज-
ारो के केश के समान ही थे। दोनो कृत्रिम सिरो को
र मन्त्री सुमतिचन्द्र के हाथो में सौपते हुए वृद्ध कला-
बोला—

"लीजिए, मैंने आपका कार्य पूर्ण कर दिया। इन्हें अब
भी पहचान नही पायेगा कि ये नकली है।"

दोनो सिरों को मन्त्री ने जब गौर से देखा तो उसके
आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वह वृद्ध कलाकार से
ा—

"वाह, तुमने तो वास्तव में कमाल ही कर दिया।
य है तुम्हारी कला! वास्तव में तुम एक उच्चकोटि के
ाकार हो। तुमने मेरी सारी चिन्ता दूर कर दी और
ा संकट दूर किया। तुम्हारा इस कार्य में जो भी व्यय
ा, वह किसी भी दिन मेरे घर आकर ले जाना और साथ
पुरस्कार भी।"

यह कहते हुए मन्त्री ने अपने गले की बहुमूल्य माला
ार कर कलाकार को दे दी।

सूर्योदय हो चुका था। चारों तरफ प्रकाश फैल गया था।
र-नारी सभी अपने कार्य में लग गये थे। मन्त्री सुमतिचन्द्र
ाथ में कटे सिरों को लेकर महल की ओर जा रहा था।

सिर के निचले हिस्से से रक्त की बूँदे टपक रही थी। ब
बीभत्स दृश्य बन गया था। मार्ग में पानी भरने कुछ र
णियाँ जा रही थी। मन्त्री के हाथ में सिरों को देख वे ह
गई थी। उन्होंने राजकुमारों के कटे हुए सिरों को पहच
लिया था। वे डरी-डरी धीमे-धीमे काना-फूसी क
लगीं—

"अरी सखी ! देख तो।"

"ये तो किसी के कटे हुए सिर हैं।"

"किसी के क्या, ये तो राजकुमार वीरभान औ
उदयभान के सिर हैं।"

"हाँ-हाँ वही है।"

"दुष्ट मन्त्री ने उन्हें मार डाला, और ये सिर अ
महारानी को देने जा रहा है।"

"हाँ, ये तो महाराज, महारानी और मन्त्री तीनो
मिली भगत है, इन्होने अपने स्वार्थ के पीछे हमारे च
और सूरज जैसे लाड़ले कुमारों को मार डाला।"

"ये दुष्ट हैं।"

"ये पापी हैं।"

और सभी रमणियाँ अपने हाथों के जल पात्रों को व
छोड़ घर की ओर दौड़ पड़ी। मार्ग में जो भी मिला उ
मन्त्री की नीच करतूत कहती गईं। देखते-देखते यह ब
हवा की भाँति सारे राज्य में फैल गई। उस हृदय विदार
दृश्य को देखने नर-नारियों की भीड़ उमड़ पड़ी। चार

र हा-हाकार मचने लगा, विलाप होने लगा। सत्या-
शी दुष्ट मन्त्री ने बहुत बड़ा पाप कर डाला। दोनों
मारो की हत्या कर डाली। कोई रोने लगा, कोई
ल्लाने लगा और कोई मारे दुःख के अपनी छाती पीटने
ा। विलाप करने लगा कि हम तो लुट गये। हमारे
नों राजकुमार हमसे छीन लिये गये अब क्या होगा।
ई नर-नारियो ने अन्न एवं जल का त्याग कर दिया।
र-वार वीरभान एवं उदयभान को याद कर रोने लगे।
नके गुणगान करने लगे। अब सारे राज्य की प्रजा में
क छा गया था। सारी प्रजा बिगड गई थी। दृश्य देखकर
न्त्री सुमतिचन्द्र मन ही मन बडा घबरा गया था।

"राज्य की प्रजा बिगड़ चुकी है, अब क्या होगा?
ारा क्रोध मुझ पर ही उतरेगा।"

किन्तु वह मन ही मन प्रसन्न भी था। वह सोच रहा था
ि उसकी सारी योजना सफल हो गई और दोनो राज-
मारों के प्राण वच गये। वह तेजी से राजदरवार पहुँचा
ौर प्रहरी को सिर खण्ड देकर बोला—

"सम्हालो इन सिरो को। ये वीरभान और उदयभान
े है। कुमारों के धड़ को मैंने जला दिया है। महाराज की
ाज्ञानुसार ये सिर महारानी तक पहुँचा दो। मैंने अपना
ार्य पूर्ण कर दिया।"

और मन्त्री तेजी से अपने घर की तरफ चल दिया।
हरी ने दोनो सिर ले जाकर दासी को सौंप दिये। दासी
न्हे महारानी के पास ले पहुँची और अभिवादन कर
ोली—

"महारानी की जय हो।"

रानी ने जब कटे हुए सिर खण्ड को देखा तो प्रसन्नता से पूछा—"क्या ये वीरभान और उदयभान के है ?"

"जी महारानी !"

"हुँ....दुष्ट और नीच व्यक्ति के यही हाल होते हैं।"

रानी उन्हें गौर से देखते हुए—

"वीरभान और उदयभान के कटे सिर....हूँ। कहाँ गई अब तुम्हारी अकड़ ? तुम तो बड़े वीर और चरित्रवान बन रहे थे।"

दासी से कहा—

"जाओ।"

दासी कटे सिरो को वहीं रख वापस चली गई।

महारानी पुनः सिर खण्डो को देखते हुए बोली—

"देखा, मेरे जाल में जो भी फँसेगा वह तुम्हारी ही तरह बेमौत मारा जावेगा। तुम तो बड़े चरित्रवान बन रहे थे। सीधी तरह मेरी बात मान लेते तो मेरे साथ मौज करते। मैं तुम्हे सिर-आँखो पर रखती। उस बूढे में क्या रखा है जो कि तुम्हारा बाप है। मैं तो सारे जीवन तुम्हें अपना पति समझती। किन्तु तुम तो बड़े धर्मात्मा बन रहे थे। लो, अब खूब अपने चरित्र और धर्म को सम्हालो।"

क्रोध में रानी ने सिर खण्डों को ठोकर मार दी, लुढक कर दूर हो गये। महारानी ने दासी को बुलवाकर आदेश दिया कि इन्हें खाई में फेक दे।

मन्त्री सुमतिचन्द्र तत्काल अपने घर पहुँचा। मार्ग में जहाँ देखो वही भीड़ जमा हो गई थी। ऊँची-ऊँची आवाजों में कई व्यक्ति चिल्ला रहे थे।

"मन्त्री सुमतिचन्द्र पापी है।"

"हमारे महाराज पापी है।"

"ये मनुष्यघाती है।"

"इन्होने दोनों कुमारों की हत्या की है।"

"मन्त्री को राज्य के बाहर कर दो। या फिर स्वयं यहाँ से चले जाएगें। ऐसे राज्य में रहना जीवन को नरक में डालना है।"

चारो तरफ नर-नारियों में क्रोध छा गया था। सभी कुपित हो उठे थे। ऐसे राज्य में जहाँ खुद राजा मूढ़ बुद्धि हो जावे, कामान्ध हो जावे, जो अपना विवेक खो बैठे तथा अन्यायी हो जावे। ऐसे राज्य में भला क्या शांति होगी। वह राजा अपनी प्रजा का क्या पालन करेगा ? प्रजा उस पर विश्वास कैसे करेगी ? ऐसे राज्य में जहाँ विद्वान और धर्मात्मा राजा न हो वहाँ राज्य का सर्वनाश ही होता है। सारे राज्य में अशान्ति फैली रहती है, लोगो का जीना दूभर हो जाता है। यही हाल सारे कनकपुर का हो गया है।

तभी एक अन्य मन्त्री महाराज तक शीघ्रता से पहुँचा।

"महाराजाधिराज की जय हो।"

"कहो, मन्त्रीवर !क्या खबर लाए हो ?"

"महाराज सारे नगर की प्रजा भड़क उठी है। राज-कुमारों की हत्या का समाचार पा प्रजा में क्रोध फूट पड़ा है।"

"तो क्या मन्त्री सुमतिचन्द्र ने राजकुमारों के सिर काट कर महारानी को सौंप दिये है ?"

"जी महाराज ! आपकी आज्ञानुसार सिर खण्डो को काट महारानी को दिये गये है। उन्ही सिरों को देख प्रजा हा-हाकार करने लगी। आपके और मन्त्री सुमतिचन्द्र के विरुद्ध हो गई।

"ओह तो यह बात है ?"

"जी महाराज ! अब कोई उपाय सोचिये अन्यथा भारी स्थिति बनेगी।"

"ठीक है।" राजा कुछ सोचते हुए बोले।

"जाओ, तत्काल प्रहरी से कहो कि वह मन्त्री सुमितचंद्र को शीघ्र बुला लावे। कहो कि महाराज ने उन्हें याद किया है वे अति शीघ्र पहुँचे।"

"जो आज्ञा महाराज !"

प्रहरी मन्त्री सुमतिचन्द्र के घर पहुँचा और राजा का संदेश मन्त्री को कह सुनाया। मन्त्री ने तब एक पत्र लिखा और प्रहरी को दे दिया।

"जाओ ! महाराज को यह पत्र दे देना।"

पत्र लेकर प्रहरी वापस राज दरबार आ पहुँचा।

महाराज के हाथों में जब वह पत्र पहुँचा तब उन्होंने वह पत्र पढ़ा जिसके भाव इस प्रकार थे—

"महाराज ! मैंने आपके आदेश का पालन कर दोनो राजकुमारो के सिर महारानी तक पहुँचा दिये और राजकुमारो के धड जला दिये। इच्छा न होने पर भी दोनो भाइयो ने अपने पिता की आज्ञा का पालन किया। किन्तु दण्ड पाने से पूर्व दोनो भाइयो ने वास्तविकता मुझे बतलाई। उन्होने कहा था कि उनका कोई कसूर नही था। यह तो सारा जाल नई माता ने फैलाया था। नई माता चरित्रहीन है। अपनी इच्छा और स्वार्थ पूर्ण न होते देख हम पर दोष थोप दिया। पिताश्री ने भी उन्ही की बात पर विश्वास किया और निर्णय कर बैठे। ठीक है जैसा हमारा भाग्य। जो भी हमसे त्रुटि हुई हो हमें क्षमा करे। ये सारी बातें राजकुमारो ने मुझे बतलाईं। अब मेरे आने से कोई लाभ नही। सारी प्रजा भी बिगड़ चुकी। अब आप ही स्थिति को सम्हाले।

पत्र को एक ओर रखकर राजा वीरधवल उदास हो गये तथा वही एक पलंग पर बैठ गये। मन व्याकुल हो गया। मस्तिष्क में तूफान उठ खड़ा हुआ। वे सोचने लगे—'अब क्या होगा ?' बिना विचारे मैंने यह क्या किया ? बहुत अधिक उत्तेजित और अज्ञानी होकर मैंने अपने ही पैरो पर कुल्हाडी मारी। यह मैंने क्या किया ? मैं तो रानी के मोह-जाल में ऐसा फँसा कि मुझे अन्य कुछ दिखाई ही न दिया। क्या सत्य है और क्या असत्य ? मैं कोई निर्णय

ही न कर पाया। अपना विवेक ही खो बैठा। हाय.......
मेरे दोनो पुत्र !'

महाराज वीरधवल अत्यन्त दुःखी हो उठे। उनकी आँखो से अश्रु धार बह निकली। सोचने लगे 'मैंने कुलटा की बातों में आकर अपना ही अहित किया। कुल के दीपक को बुझा दिया। दोनों राजकुमारो की हत्या करवा डाली। उनका शरीर तो अब कभी का जलकर भस्म हो चुका होगा और राख भी अब शेष नही रही होगी। वह भी उड़ गयी होगी। हाय.......अब मेरा क्या होगा? मेरा वंश, मेरा खानदान, यह राजपाट कैसे चलेगा? मैं किसके सहारे जीऊँगा? मैंने बहुत बड़ा पाप किया है। एक बार नही कई बार किया। महारानी पद्मावती को दिये गये वचन को तोड़ा। पुनः विवाह किया। राजकार्य से मुँह मोड़ लिया। रानी मधुलता के जाल में फँस गया। उसकी ही बातों पर विश्वास कर मैंने दोनों कुमारों की हत्या करवा डाली। महारानी पद्मावती भी मुझे स्वर्ग में धिक्कार रही होगी और यहाँ प्रजा।'

प्रजा का ख्याल आते ही महाराज विचलित हो उठे 'प्रजा जब मुझसे पूछेगी तो मैं क्या जवाब दूँगा? कौन प्रजा को समझावेगा? उनका क्रोध किस प्रकार शान्त किया जावेगा। राज्य का क्या होगा? त्रिया चरित्र मे आकर मैंने अपना ही भारी नुकसान कर लिया। अपनी शान और मान-मर्यादा को भूल बैठा।' और फूट-फूट कर रोने लगे सोचने लगे—'मन्त्री सुमतिचन्द्र तुम तो ज्ञानी और चतु

थे। तुम्हें तो कुछ करना चाहिए था। मेरी आँखों पर पड़े रूप जाल का पर्दा हटाना था। मेरी तो बुद्धि भ्रष्ट हो गई थी किन्तु तुम तो समझदार थे। तुम्हें तो राजकुमारो के प्राणो की रक्षा करनी थी। तुमने भी मेरी आज्ञा का पालन कर दोनो की हत्या कर दी। ओह.......अब क्या होगा ?'

राजा विलाप करके रोने लगे। उन्हें अपने प्रिय पुत्रों का वियोग अब बेचैन करने लगा। उनकी बुद्धिमत्ता, आज्ञाकारिता और अनेक गुणों को याद कर राजा के नैनों से नीर बहने लगा।

कहावत प्रसिद्ध है कि "बिना विचारे जो करे सो पीछे पछताय।" वास्तव में जो व्यक्ति अपनी बुद्धि का उपयोग नही करता, अपना विवेक खो बैठता है तथा कार्य को करने के पूर्व उस पर गहनता से विचार नही करता वह व्यक्ति बाद में पछताता है। पर कहा जाता है कि....."बाद में पछताने से कोई लाभ नही", पश्चात्ताप की आग उसे जला देती है। उसकी चारों ओर निन्दा होती है उस पर संसार हँसता है।

और यही हाल राजा वीरधवल का हुआ। प्रजा में जो क्रोध भड़क उठा था उसे बहुत ही कठिनाई से कम किया गया। किन्तु फिर भी प्रजा के मन में राजा तथा मन्त्री की करतूत एक गांठ बनकर रह गई। इसी तरह कुछ दिन व्यतीत हो गये। महाराज व्याकुल रहने लगे उनका मन राजकार्य से हट गया। दिन-रात राजकुमारों के वियोग का गम उन्हें परेशान किये जा रहा था।

□□

७

इन्हीं दिनों में कनकपुर राज्य में दूसरे देश से कुछ ज्योतिषियों ने प्रवेश किया। ये ज्योतिषी बड़े विख्यात थे। भूत-भविष्य को जानने वाले थे। कनकपुर नगर में प्रवेश करने पर उन्हें नगर को देखकर प्रसन्नता हुई। नगर उन्हे बहुत ही सुन्दर लगा। नगर के आस-पास सुन्दर उद्यान, ऊँचे-ऊँचे वृक्ष, सुन्दर जलाशयों ने उनके मन को मोह लिया। नगर में बड़े-बड़े भवन पंक्तिबद्ध थे। राजमार्ग चौड़ा और साफ-सुथरा था। चारों ओर स्वच्छता का साम्राज्य था। गन्दगी नाम मात्र को भी नहीं थी। यह सुन्दर नगर उन्हें बहुत ही भला लगा किन्तु उन्हें एक बात का बड़ा आश्चर्य हुआ। ऐसे सुन्दर विशाल और खुशहाल नगर में एकदम सूनापन। कही कोई गति नही। मानों यहाँ किसी भी मानव का निवास ही नही हो। चारों ओर सन्नाटा। इक्के-दुक्के व्यक्ति कही-कहीं दिखाई देते किन्तु उनका चेहरा उदास। नगर के बाजार में प्रवेश किया तो वहाँ भी सभी दुकाने, कुछ को छोड़कर, बन्द पाई गई। मानों कोई हड़ताल हो। व्यापार, वाणिज्य, लेन-देन सभी ठप्प पड़े है। ऐसे सुन्दर नगर की दयनीय दशा देखकर वे ज्योतिषी बड़े उदास हो गये। सोचने लगे—'क्या कारण है कि यह सुन्दर नगर एकदम सुनसान है? यहाँ के लोग

उदास से क्यो दिखाई दे रहे है ? किसी से इसका कारण पूछना चाहिए ।'

तभी वहाँ से एक नगरवासी गुजरा, जिसका चेहरा एकदम उदास उतरा हुआ था । ज्योतिषी ने उसे रोका—

"सुनो भाई !"

नगरवासी ने उन्हें गौर से देखा और वह उनके पास रुक गया । नगरवासी उन्हें देखकर समझ गये कि ये कोई महान पुरुष लगते है । शायद पंडित ही हो । स्वच्छ वस्त्र धारण किये हुए चौड़ा मस्तक, हाथ में कुछ पुस्तक । ये कोई ज्ञानी लग रहे है । नगरवासी ने उन्हें प्रणाम किया ।

"सुखी रहो ।" ज्योतिषियो ने कहा तथा पुनः नगरवासी से पूछा—

"क्यो भाई ! यह नगर एकदम सुनसान क्यों है ? क्या बात है ?"

तब नगरवासी फूट-फूटकर रोने लगा । ज्योतिषी उसका रोना देखकर विचलित हो उठे । उन्होने उसके कन्धे पर स्नेह से हाथ रखते हुए पूछा—

"क्या बात है ? तुम क्यो उदास हो ? तुम्हारे रोने का क्या कारण है ?"

"पण्डितजी ! यहाँ अनहोनी घटना घट गई ।"

"अनहोनी !"

"हाँ, अनहोनी ! वैसे तो यह सब रचा-रचाया जाल है । किन्तु इसे अनहोनी ही कहा जा सकता हैं क्योकि हमें हमारे महाराज से ऐसी उम्मीद नहीं थी ।"

"क्यों, क्या किया यहाँ के राजा ने ?"

"एक बहुत ही अनिष्ट कार्य कर डाला ।"

"वह क्या ? हमें भी तो सुनाओ ।"

"क्या करेंगे, आप सुनकर ? आपका मन अशांत होगा जैसे हम नगरवासियों का है । हम सभी दुखी है ।"

"अपना दुःख हमें भी तो सुनाओ । शायद कोई ह निकल आवे ।"

"पण्डितजी जो नष्ट हो गया है उसके लिए क्या ह निकल सकता है ।"

"कौन नष्ट हो गया है ?"

"हमारे दोनों राजकुमार मारे गये ।"

"मारे गये ?"

"जी हाँ !"

"पर क्यों ? क्या उन्होंने अपराध किया था ?"

"हाँ, अपराध किया था । उनका यही अपराध था वे आज्ञाकारी थे । उनका यही अपराध था कि उन्हे महारानी से मिलकर नीच कर्म नही किया ।"

"क्या मतलब ! हम आपका आशय नही समझे । ज और स्पष्ट कर सारा हाल सुनाओ ।"

तब नगरवासी ने रोते हुए सारा हाल ज्योतिषियो सुनाया । किस प्रकार महाराज ने रानी को दिया वचन तो और दूसरा विवाह कर लिया । किस प्रकार नई महारा ने अपना जाल बिछाया और राजकुमारों पर मिथ्य आरोप लगाया तथा महाराज ने बिना सोचे-समझे निर्णय ले लिया—सत्य और झूठ का पता लगाये बगैर ह

हारानी की बात को, उसके छल-कपट को और उसके ारा कहे झूठे वचन को महाराज ने सत्य मान लिया और ाजकुमार वीरभान एवं उदयभान को मृत्यु-दण्ड दे दिया।

"मृत्यु-दण्ड!" आश्चर्य से ज्योतिषियो के मुख से नेकला।

"जी हाँ, मृत्यु-दण्ड! यह सारा जाल महारानो का ी विछाया हुआ था। रानी और मन्त्री ने मिलकर दोनो ुमारो को खत्म करवा डाला।"

"ओह! यह तो बड़ी ही दुखद घटना है।"

"इसीलिए यहाँ पूरे नगर में राजा के प्रति वातावरण ूषित हो चुका है। सभी का भारी विरोध है, सारा कार्य प्प पडा है और सारी प्रजा के मन मे अशान्ति है।"

"ओह ......तो यह बात है!"

"जी हाँ!"

ज्योतिषी भी यह घटना सुन व्याकुल हो गये। उन्होंने राजा से मिलने का निश्चय किया। देखना चाहते थे कि वह कौन-सा राजा है जिसने अपने ही पुत्रो को मौत के घाट उतार दिया।

तभी नगरवासी बोला—

"श्रीमान! आप कौन है तथा कहाँ से पधार रहे है?"

"हम दूर देश के रहने वाले ज्योतिषी है। भ्रमण करते हुए यहाँ आ पहुँचे है।"

"तो आइये महाराज! आप मेरे घर आतिथ्य स्वीकार करें।"

"ठीक है, चलिए।"

ज्योतिषी नगरवासी के घर पहुँचे। वहाँ उनका उचि आदर-सत्कार किया गया। उन्हें भोजन करवाया गया ज्योतिषियो के मस्तिष्क में राजकुमारो वाली घटना घ् रही थी। उन्होंने अपना पंचांग खोला। वार-तिथि नग वासी से ज्ञात कर नक्षत्र आदि को देखा तथा अपने गणि के आधार पर स्थिति की जानकारी प्राप्त की और तत्क प्रसन्न हो बोले—

"अरे, राजकुमार तो जिन्दा है।"

"क्या?" नगरवासी ने कहा—"राजकुमार जि है?"

"हाँ, ज्योतिष के आधार पर दोनो जिन्दा है अ सकुशल है।"

"महाराज! क्या आप सत्य कह रहे है? जरा एक पुनः देखे कि क्या ऐसा हो सकता है?"

"हाँ-हाँ, भाई! हमने अच्छी तरह पंचांग में देख तुम्हें बतलाया सो सत्य है।"

"किन्तु हमने तो अपनी आँखो से राजकुमारो के सिरों को देखा। फिर यह क्या चमत्कार है?"

"हो सकता है, किन्तु वे सिर किसी दूसरे के भी हो सकते हैं। हमारे शास्त्र के अनुसार तो आपके र कुमार जिन्दा है।"

"ओह, यह तो आपने सचमुच आश्चर्यजनक बतलाई।"

"जाओ, अपने राजा से कह दो कि वे व्याकुल न हों। दोनों राजकुमार मरे नही है, वे जिन्दा है और सकुशल है।"

ज्योतिषियो की वाणी सुनकर नगरवासी प्रसन्नता में भागता हुआ राजदरबार में पहुँचा। मार्ग में जो भी मिलता उसे वह शुभ समाचार देता जाता, इस प्रकार कुछ व्यक्ति प्रसन्नता में झूमते हुए उसके साथ राजदरबार में पहुँच गये। उन्होने ज्योतिषियों द्वारा की गई भविष्यवाणी राजा तक पहुँचा दी। भविष्यवाणी सुनकर राजा को भी आश्चर्य हुआ। उन्होने प्रसन्न हो तत्काल अपने एक मन्त्री को बुलवाया और खुशी के आवेग में आकर उससे कहा—

"सुना तुमने ! हमारे यहाँ नगर में ज्योतिषी पधारे है। उनके अनुसार हमारे दोनों लाल जिन्दा है।"

"जी महाराज ! मैंने भी अभी-अभी सुना है और यह खबर पूरे नगर में फैल गई है।"

"यह तो बड़ी आश्चर्यपूर्ण खबर है कि दोनों जिन्दा है। और यदि वास्तव में ऐसा हो तो हम बहुत ही भाग्यशाली हैं। यह हमारे लिए बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।"

"हाँ, महाराज ! यह तो बहुत ही शुभ समाचार है।"

"तुम तत्काल जाओ और ज्योतिषियो को हमारे पास बुला लाओ।"

"जी, महाराज !"

"और देखो, उन्हें पूरे सम्मान के साथ हमारे पास लाया जावे।"

"जैसी आज्ञा महाराज की।"

मन्त्री वहाँ से चल दिया। शुभ समाचार जानक राजा बहुत ही प्रसन्न हुए। उनका चेहरा खिल उठा।

राजा वीरधवल अपनी सभा में विराजमान थे। सभ में सभी मन्त्रीगण तथा सामन्त उपस्थित थे। मन्त्री सुमति चन्द्र ही वहाँ पर अनुपस्थित था। वह राजकाज में तथ सभा में बहुत ही कम भाग लेता था। जानता था कि महाराज ने अज्ञानी होकर अपना ही अहित किया तथ मुझे ऐसा आदेश दे बैठे जो मेरे लिए दुष्कर था फिर सारं प्रजा भी तो उसके विरुद्ध हो गई थी। ऐसे में भला व राजसभा मे किस प्रकार उपस्थित होता। कैसे अपना मुं दिखाता, कैसे प्रजा का मन जीतता और कैसे अप विश्वास जमाता। तभी प्रहरी ने ज्योतिषियों के आने व सूचना राजा को दी। राजा ने कहा—"उन्हे सम्मानपूर्व राजसभा मे बुलाया जावे।"

ज्योतिषियों ने राजसभा में प्रवेश किया और राजा व अभिवादन किया। राजा तथा सभी उपस्थित सज्जनो उनका आदर-सत्कार किया तथा उचित स्थान पर बैठाय

"हमारे अहोभाग्य कि आपने हमारे राज्य में आव हमें दर्शन दिये। आपके चरण नगर में रखने पर यह ध हुआ।"

"राजन्! हम तो भ्रमण के लिए निकले है। मार्ग आपका यह सुन्दर नगर पड़ा। इसे देखकर हमें प्रसन्न

ई। किन्तु यहाँ की वर्तमान हालत देखकर कुछ निराशा हुई।"

"आप तो ज्योतिषी है, भूत और भविष्य के ज्ञाता है। ाप सारी स्थिति जानते है। आपके द्वारा की गई भविष्य-णी कि राजकुमार जिन्दा है·······क्या ···क्या यह सत्य ? हमें तो विश्वास ही नही होता।"

"विश्वास न होने का तो प्रश्न ही नही। हमारा शास्त्र ोर हमारी विद्या कभी झूठी नही हो सकती। आपके ोनो राजकुमार प्रसन्न है और जिन्दा है।"

सुनकर सारी सभा मे हर्ष फैल गया। सभी यह शुभ माचार सुनकर प्रसन्न हो गये। राजा ने पुनः पूछा—

"किन्तु मेरी आज्ञानुसार उन्हें मन्त्री सुमतिचन्द्र द्वारा ार डाला गया था। उनके सिर धड़ से अलग कर दिये ये थे। सिरो को वह यहाँ पर ले आया था। उन्हे सभी ने खा तो फिर वे जिन्दा कैसे है ?"

"राजन् ! इतना सब कुछ होने के पश्चात भी आपके ोनों कुमार जीवित है। हमे तो इसमें आपके मन्त्री मतिचन्द्र की ही चतुराई स्पष्ट दिखाई दे रही है।"

"मतलब यह हुआ कि मन्त्री सुमतिचन्द्र ने उन्हें मारा ो नही और उनके सिर भी नही काटे। तो फिर····?"

राजा सोचते हुए—'तो फिर वे कटे सिर किसके थे ? वे ो हूबहू राजकुमारो के चेहरे के समान ही थे जिन्हे सभी ने देखा था और सभी का कहना है कि मन्त्री ने उन्हें ार डाला····तो····?'

"राजन् ! आपका मन्त्री बड़ा ही चतुर है। उसने अ
चतुराई और बुद्धिमानी ने शायद राजकुमारो को ब
लिया।"

"हाँ, इससे तो यही स्पष्ट होता है कि मन्त्री ने दो
राजकुमारों का वध करवाया ही नही।"

"हाँ, राजकुमारो को बचा लिया। हो सकता है
राजकुमारो के सिर के स्थान पर वह कृत्रिम सिर बना
यहाँ ले आया हो और राजकुमारों को कही भेज दि
हो। इससे आपके आदेश का पालन भी हो गया औ
राजकुमारों की जान भी बच गई।"

"ओह ! वास्तव में यह तो बहुत बडा बुद्धिमत्ता
कार्य किया। धन्य हो मन्त्री तुम और तुम्हारी रा
भक्ति !"

"वास्तव में आपके मन्त्री सुमतिचन्द्र प्रशसा के पा
है।"

तब राजा ने बड़ी अधीरता से पूछा—

"अगर मेरे राजकुमार,जीवित है तो वे कहाँ है ? कि
हाल में है ? कृपया शीघ्र बताये। मेरा मन बहुत व्याकु
है।"

"धीरज रखो, राजन् ! हमारी भविष्यवाणी झूठी न
हो सकती। वे दोनो सकुशल है और आपके राज्य
बाहर है किन्तु किस राज्य में है यह बता पाना कठिन है
वे कुछ वर्षों के पश्चात यहाँ स्वयं आवेगे। आप मन
सन्तोष रखे।"

राजा वीरधवल के लिए यह क्या कम था कि उनको र्खता का फल राजकुमारो को नही भुगतना पड़ा अर्थात् जोवित है और यह सारी चतुराई मन्त्री सुमतिचन्द्र की ी है। महाराज ने तत्काल मन्त्री सुमतिचन्द्र को राजसभा उपस्थित होने के लिए एक अनुचर को बुलाने भेजा। छ ही समय मे मेधावी मन्त्री सुमतिचन्द्र राजदरबार मे ा पहुँचा। राजा ने उसका आदर-सत्कार किया। राजा ने न्त्री सुमतिचन्द्र से कहा—

"धन्य हो मन्त्री तुम और तुम्हारी बुद्धि ! धन्य है मन्त्री ुम्हारा जीवन और यत्न ! तुमने अभयदान देकर मेरे ोनो रत्नो को जोवित रखा। ऐसे चतुर और स्वामिभक्त न्त्री पर मुझे गर्व है, सारे राज्य को गर्व है। किन शब्दो में ं तुम्हारा गुणगान करूँ। तुम पुण्य के भागीदार हो ! तुम ुण्यवान हो ! तुम्हे पाकर मैं धन्य हूँ।"

मन्त्री सुमतिचन्द्र समझ गया कि राजकुमारो के जीवित होने की खबर महाराज को पता चल गई होगी, किन्तु उसने महाराज से कहा—

"महाराज ! मैंने तो आपकी आज्ञा का पालन किया और दोनो कुमारो के सिर काट महारानी तक पहुँचा दिये फिर आप ......"

"नही-नही, मन्त्री ! तुमने हमारे आदेश का पालन तो किया, किन्तु उसमें भी हम पर बहुत बडा उपकार किया। तुमने हमें नया जीवन दिया। तुम देख रहे हो हमारे यहां ज्योतिषी पधारे हैं। उन्ही की भविष्यवाणी है कि राजकुमार जिन्दा और सकुशल है।"

अब सुमतिचन्द्र समझ गया था, वह बोला—

"महाराज ! क्षमा करें, मैंने तो आपको धोखे में रखा
वास्तव में मैंने दोनों कृत्रिम सिर महारानी तक पहुँचा दि
थे। दोनों राजकुमार अभी जीवित है, ज्योतिषियो व
भविष्यवाणी सत्य ही है और ऐसा मैंने राजकुमारों व
मेरे प्रति प्रेम, श्रद्धा और उनके निरपराध होने के कार
किया।"

राजा ने तब मन्त्री से कहा—

"मन्त्री ! तुमने बहुत ही बडा कार्य किया है। मैं अ
यह राज्य और प्रजा आपकी आभारी है।"

तब मन्त्री ने सारी बातें राजा एवं वहां उपस्थित स
मन्त्री सामन्तों को बता दी। महारानी मधुलता की नीच
को उजागर किया। सुनकर सभी महारानी के कुकृत्यो
क्रोधित हुए। राजा ने मन्त्री सुमतिचन्द्र एवं ज्योतिषियो
भारी सम्मान किया तथा बहुमूल्य रत्न दिये। धन-धा
से सम्मान किया तथा ज्योतिषियों को ससम्मान वि
किया।

८

वास्तविकता जानकर सारी प्रजा खुशी से नाच उठ
राजकुमारो के जीवित होने से उन्हें अपार प्रसन्नता
रही थी। देखते-ही-देखते सारी स्थिति हर्ष में बदल ग

सभी के चेहरों पर रौनक लौट आई। सभी के मुरझाये चेहरे खिल उठे।

दुराचारी मानव कई पाप करते है। पाप करते समय वे तनिक भी नही हिचकिचाते, यह नही सोचते कि इसका क्या परिणाम होगा। दुराचारिणी और कामान्ध रानी मधुलता भी अपने पापों को करके उन्हें छुपाती रही। वह तो प्रसन्न थी कि उसका भेद नही खुला और राजकुमार ही दोषी पाये गये। उन्हें ही मेरे पापो का परिणाम भुगतना पडा। अब तो वे मारे जा चुके है अब कौन उसका भेद खोलेगा और उसके पाप का घडा फोडेगा। वह मन ही मन प्रसन्न थी। उसे सपने में भी आशा नही थी कि एक दिन उसके पाप का घड़ा अपने आप फूट जायेगा और उसे ही ले डबेगा। क्योकि पाप तो सिर चढकर बोलता है। कुछ कार्य ऐसे है जो छिपाये नही छिपते। पाप भी कभी छुपाये नही छुपता। मनुष्य पाप कही भी करे—घर में अथवा बाहर किन्तु वह एक दिन दुनिया वालो की नजर मे आ ही जाता है और जो पाप-कर्म करता है वह उसका फल भोगता ही है। कर्म चाहे दुष्कर्म हो अथवा सत्कर्म उसका फल भोगना ही होता है। अज्ञानी, अज्ञानतावश जुल्म अथवा पाप करता है। अपने ही स्वार्थ के लिए निरपराधी पर जुल्म ढाता है और मृत्यु के मुँह में पहुँचा देता है और वह सोचता है कि मेरे पापो को कोई भी नही जान सकता हैं और मैं अच्छा ही कर रहा हूँ। वह यह नही सोचता कि ऐसा करके वह अपने ही लिए कांटे बो रहा हैं।

इसीलिए पापी की कभी भी जीत नहीं होती औ
उसका अन्त बुरा ही होता है। उसे निन्दा का पात्र बनन
ही पड़ता है। यह दुनिया उसी के गुणगान करती है जे
धर्मात्मा है, जो अच्छे कार्य करता है।

रानी के द्वारा किया गया पाप भी खुलकर साम
आ गया। रानी के कृत्यो की जानकारी महाराज को मन्त्र
ने दी। यह बात सारे नगर मे फैल गई कि राजकुमार निरप
राधी थे। यह सारा जाल रानी ने ही बिछाया था। रान
के शांत जीवन में हलचल मच गई। किस्मत को बदल
देर नही लगती। रानी के पापो को जानकर राजा वीर
धवल अत्यन्त क्रोधित हो गये थे। वे हाथ मे तलवार
रानी के कक्ष में पहुँच गये।

महाराज वीरधवल का विकराल रूप, क्रोधवश अंग
के समान दहकती आँखे और हाथ में तलवार देख रान
ऊपर से नीचे तक काँप गई। वह आश्चर्य और भय
राजा की ओर देखने लगी—

"महाराज!"

"नीच कुलटा! तेरी सारी करतूत मालूम हो गई है।

"स्वामी! यह आप क्या कह रहे हैं?"

"वही जो तूने किया है।"

"मैंने मैं ...मैंने क्या किया? महाराज! मैं तो आप
चरणो की दासी हूँ। भला, मुझसे क्या अपराध हुआ?"

"अपराध.......? चरित्रहीन! महापाप करके मुझ
पूछती है कि मुझसे क्या अपराध हुआ?"

अब रानी समझ गई थी कि महाराज को सारी बातों का पता चल गया। वह भय से कॉपती हुई और अपना अपराध छुपाती हुई बोली—

"आपको शायद भ्रम हुआ है या किसी ने मेरे विरुद्ध आपके कान भरे है।"

"मुझे कोई भ्रम नही हुआ। मेरी बुद्धि तो तुम्ही ने भ्रष्ट की थी। तुम्हारे मोह जाल की पट्टी मेरी आँखो पर बँधी थी जिससे मैं अपने और पराए मे भेद नही कर पाया। तुम्हारे पापो को भी नही देख पाया।"

"महा""राज ! मैं तो आपकी दासी हूँ। आपकी""""" पत्नी हूँ।"

"और तूने ही मेरे कुल के दीपक को बुझा दिया। तुझे शर्म नही आई अपने ही पुत्रों पर नीयत खराब करते और जब तेरा स्वार्थ पूर्ण नही हुआ तो उल्टा कुमारो के सिर पर दोष थोप दिया। वह तो भला हो मन्त्री सुमतिचन्द्र का जिसने अपने विवेक से दोनो राजकुमारो को बचा लिया तू तो डायन बनकर दोनो को खा ही गई थी। यह सब तेरी ही करतूत है।"

"नही महाराज ! यह सब झूठ है।"

"नही, यह सच है कि तू चरित्रहीन है, कलंकिनी है और इस पृथ्वी पर बोझ है।"

रानी को पूर्ण विश्वास हो गया था कि महाराज अब उसकी बातों में आने वाले नही है। उसे तो यह आश्चर्य

था कि किस प्रकार उसके पापो का घड़ा फूटा ? किस प्रकार महाराज को सारी बातों का पता चला ? अब बचने का कोई भी मार्ग दिखाई न दे रहा था । अतः उसने पुनः त्रिया चरित्र रचा । वह रोने लगी, महाराज के कदमों पर गिर पडी तथा कहने लगी—

"नाथ ! मैं तो अबला हूँ, आपकी दासी हूँ । मैंने यह अपराध नही किया । मुझे क्षमा करे ।"

"अपराध नही किया और क्षमा माँग रही है । अब मेरी आँखें खुल गई है । तेरे रूपजाल का पर्दा हट गया है । तू वासना की अन्धी है । तूने मेरे खानदान पर, मेरे राजघराने पर कलंक का टीका लगाया है । साथ ही अपने माता-पिता की इज्जत को भी मिट्टी में मिला दिया । सती बनकर अब आँसू बहा रही है । तेरे दुष्कर्म ही अब तेरी मौत बन गये हैं । तेरा अब अन्तिम समय आ गया है ।"

क्रोधवश राजा ने अपना हाथ ऊपर उठा रानी पर तलवार से वार करना ही चाहा था कि रानी दौड़ी और "बचाओ बचाओ" इस प्रकार चिल्लाने लगी । महाराज उसके पीछे दौडे । द्वार पर उसे पकड़ लिया । पुनः उस पर तलवार से वार करना ही चाहते थे कि वहाँ पर मन्त्री सुमतिचन्द्र आ पहुँचा और उसने महाराज का हाथ पकड़ लिया—

"महाराज ! यह आप क्या कर रहे है ?"

"वही जो मुझे बहुत पहले करना चाहिए था । तुम ... जाओ मंत्री !"

"महाराज ! यह तो पाप होगा ।"

"पापी को उसके पाप की सजा देना कोई पाप नही है ।"

"सो तो ठीक है किन्तु आप यह क्यो भूल गये कि गाय, ब्राह्मण और नारी पर वीर कभी भी हाथ नही उठाते हैं और यदि ऐसा करते है तो निश्चय ही पाप के भागीदार बनते है ।"

"नही........यह कुलघाती है, कुलक्षणा है । इसने मेरे वंश का नाश किया है । इसे मैं निश्चय ही दण्ड दूँगा ।"

"महाराज ! रानी की हत्या करना आपके लिए उचित नही है । जरा सोच-विचार कर कार्य कीजिए । इससे तो आपका ही यश घटेगा । आप इसे अभयदान दीजिए ।"

राजा वीरधवल ने मन्त्री की सलाह को मान रानी को छोड दिया । किन्तु वे उसे दण्ड अवश्य देना चाहते थे । अतः उन्होने मन्त्री से कहा—

"महामन्त्री ! यह नीच और कुलटा है । इसको मार डालना ही उचित था । इसकी पोशाक शीघ्र बदलवाकर, सिर के सारे बालो को उतरवा लो । फटे पुराने वस्त्रो को पहनाकर इसका मुँह काला कर दो ।"

फिर रानी की ओर देखकर—

"अरे कुलटा ! तूने मेरे ही उज्ज्वल वंश पर कलंक का टीका लगा दिया । धिक्कार है तुझे ! तूने अपने माता-पिता का नाम लजाया । होते ही तुझे मौत आ जाती तो श्रेयष्कर था ।"

फिर मन्त्री से—

"इसका मुँह देखना भी पाप है। इसे महल के बाहर निकाल दो। इसे ऐसी सलाखों वाली कोठरी में डाल दे जहाँ सभी नर-नारी देखें, इसके मुँह पर थूकें और इसे धिक्कारे।"

राजा वीरधवल वहाँ से बाहर चले गये।

राजा के आदेशानुसार रानी मधुलता की बुरी हालत कर जेल में डाल दिया गया। उसे देखने नर-नारियों की भीड जमा हो गई थी। कोई उसका विकराल रूप देख डर जाता तो कोई खुश होता।

नीच व्यक्तियो को अपने कर्मों का जरा भी पश्चाताप नही होता। उन्हें अपने दोष नजर नहीं आते। वह दूसरों को ही दोषी समझ उसे श्राप देता है। रानी को भी अपने कुकर्मों का जरा भी पश्चात्ताप नहीं था। उसके कर्म ही उसके दुःख के कारण बन गये थे। किन्तु फिर भी वह समझ नही पाई। रानी को जेल से निकाल कर महाराज ने गहरे सूखे कुएँ में उतरवा दिया था। गहरे कुएँ में रानी घवरा उठी। उसके लिए यह भयानक यातना थी किन्तु अब क्या किया जाए? वह सोचने लगी 'कि जाते-जाते शायद दोनों राजकुमारो ने मेरी सारी वास्तविकता मन्त्री सुमति-चन्द्र को बताई होगी और मन्त्री ने उन्हें मारने के बजाय कहीं छुपा दिया। मेरी सभी बाते मन्त्री ने ही महाराज को बताई होंगी। मन्त्री भी बड़ा चालाक निकला। मेरे पास राजकुमारो के कृत्रिम सिर भिजवा दिये। राजकुमार

जिन्दा है। लेकिन मेरा भी नाम मधुलता है। मैं भी दोनों को नही छोडूँगी। चाहे वे कही भी हो। अपने अपमान का बदला अवश्य लूँगी। इसके लिए चाहे मुझे नागिन ही क्यो नही वनना पडे। मैं उन्हें नही छोड़ूँगी।'

मनुष्य की जैसी बुद्धि होती है वैसी ही उसकी गति होती है। विनाश के समय उसकी बुद्धि भी भ्रष्ट हो जाती है। यही हाल रानी का भी हुआ। वह बदले की आग में जलने लगी। उसे अन्न-जल मिलना वन्द हो गया था। भूख-प्यास से व्याकुल हो रानी ने दम तोड़ दिया और अगले जन्म में उसने नागिन का रूप पाया। वह अपने बदले को भूली नही थी।

क्रोध, अपमान और ईर्षा में फँसकर जो व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त होते हैं वे व्यक्ति अधोगति में फँसते हैं और जो व्यक्ति आत्मघात करते है अर्थात् अग्नि में जलकर, विष खाकर या जल में डूबकर आत्मघात करते है वे व्यक्ति भी अधोगति में ही फँसते है। उनके लिए नरक का ही द्वार खुलता है। ऐसा मरना संसार में व्यर्थ है। महापुरुषों ने भी कहा है कि आत्यघात करना महापाप है। ऐसी भूल कदापि नही करनी चाहिये। इसलिए कहा गया है कि जो धर्म का पालन करता है। दूसरों की भलाई और त्याग में जिसका जीवन व्यतीत होता है, जो दूसरों के लिए जीवित रहता है, जो प्राणी मात्र पर दया करता है ऐसा व्यक्ति स्वर्ग को प्राप्त करता है। दूसरो के लिए बुरे विचारों के रखने और खोटे भावों को मन में रखने के कारण ही रानी ने नागिन का जीवन पाया और अपना बदला लेने के लिए

उसी मार्ग से वन में गई जहाँ से राजकुमार गुजरे थे भयानक रूप कर, जहर से भरी हुई, फुंकारती हुई व चली जा रही थी।

इधर दोनो राजकुमार वन में भटक रहे थे। कर्मफल के कारण उन्हें घोर यातनाएँ भुगतनी पड़ रही थी। उनके ऊपर पर दुःखो के बादल छा गये थे। एक वह दिन था कि वे मखमल की सेज पर आराम करते और आज यह गति बनी कि पृथ्वी पर ही लेटना पड़ रहा था। उनका कोमल शरीर पृथ्वी की कठोरता को सहन कर सकने को विवश था। पानी के स्थान पर जो दूध का सेवन करते थे उन्हें आज पानी के लिए भी दर-दर भटकना पड़ रहा था। समय पर उन्हें पानी भी प्राप्त नही होता था। जो महलो में कई प्रकार के व्यंजनों का सेवन करते थे वे आज वन के फल-फूल खाकर समय व्यतीत कर रहे थे। यह सब पूर्वकर्मों का ही परिणाम था जो उन्हें भुगतना पड रहा था। क्योकि कहा गया है कि शुभ कर्म से ही स्वर्ग और अशुभ कर्म से ही नरक प्राप्त होता है अतः कर्म ही प्रधान है। फल-फूल खाकर दोनों भाई जल के लिए वन में भटक रहे थे। कुछ दूर जाकर उन्हें एक झरना दिखाई दिया। शीतल जल से उन्होंने अपनी प्यास बुझाई। चारो ओर अन्धकार फैलने लगा था। निशा ने अपना आंचल फैला दिया। रात्रि विश्राम के लिए वे एक घने पेड़ के नीचे वैठ गये।

वृक्ष के नीचे वैठकर वीरभान ने कहा—

"रात्रि विश्राम के लिए यह स्थान उचित होगा।"

"हाँ, मैं भी यही विचार कर रहा हूँ।"

"तुम विश्राम कर लो भाई ! जिससे थकान दूर होगी। रात्रि में पहरा दूँगा क्योंकि जंगली जानवरो का भी य है।"

"नही आप आराम करें, पहरा मैं दूँगा।"

"नही-नही; तुम अधिक थक गये होगे। उचित ही ोगा कि तुम आराम करो। मैं पहरा दूँगा।"

छोटा भाई नही चाहता था कि वह विश्राम करे और बड़े भाई को कष्ट हो। अतः वह पुनः बोला—

"पहले आप कुछ समय विश्राम पा ले, मुझे जब नींद ायेगी तब आपको जगा लूँगा फिर आप पहरा देना।"

"ठीक है, जैसी तुम्हारी इच्छा।"

कहकर वीरभान आराम करने के लिए लेट गया। दिन भर की थकान के कारण उसे तत्काल नींद आ गई और उदयभान प्रहरी के रूप में सतर्क हो गया। □

६

मध्य रात्रि का समय। वीरभान गहरी निद्रा में लीन था। उदयभान पहरा दे रहा था। तभी एक आश्चर्यजनक टना घटी। जिस समय उदयभान पहरा दे रहा था उस मय उसने एक देव विमान जाते हुए देखा। विमान प्रकाश-

वान था जिसमें देवी-देवता विराजमान थे। उनके निकट से जाते हुए विमान वहीं रुक गया। देवी-देवता ने दोनों भाइयों को देखा। देव दोनों भाइयों की स्थिति को समझ गये थे। मन में विचार किया—

'ओह दोनों सुन्दर बालक जो कि निर्दोष है कैसे कष्ट भोग रहे है। वन-वन भटक रहे है।'

फिर उन्होंने देवी से कहा—

"सुनो, एक बड़ी आश्चर्य की बात है।" दोनो भाइयों की ओर इशारा करते हुए—"ये दोनों बालक सगे भाई है। राजा के पुत्र है। राजसुख के बजाय इन्हें वन में भटकना पड़ रहा है।"

"क्यों स्वामी ! ये वन में क्यो भटक रहे है ? इन्होंने अपना घर क्यो त्याग दिया ?"

तब देव ने कहा—

"इनकी माता का स्वर्गवास हो गया। इनके पिता, जो कि राजा है, ने दूसरा विवाह कर लिया। विमाता का दोनों भाई आदर करते थे। उसे अपनी सगी माँ समझते थे। किन्तु विमाता चरित्रहीन निकली। जवानी के जोश में वह अन्धी हो गई और उसने अपने ही दोनों पुत्रों पर कुदृष्टि डाली। दोनो भाइयों ने उस प्रस्ताव को ठुकरा दिया। विमाता ने तब नया जाल रचा और राजा से इनकी शिकायत की कि दोनो ने उसके साथ चरित्रहीनता का व्यवहार किया। मेरा शील भंग करने की चेष्टा की। राजकुमारो को उसने दुराचारी बतलाया। राजा जो नयी रानी के रूप-सौन्दर्य में उलझ गये थे, यह बात सच मान

बैठे और बिना छान-बीन किये उन्होने दोनो भाइयो को मार डालने का आदेश दे दिया। राजा का मन्त्री, जोकि चतुर और बुद्धिमान था, सारी बात समझ गया था, उसने सभी सत्य बाते राजकुमारो से जान ली। राजकुमारों ने उसे सारी बात सत्य कह सुनाई। अपनी बुद्धि और विवेक से मन्त्री ने दोनो भाइयो को रातो-रात देश से निकाल दिया। उन्हे बजाय मारने के राज्य से बाहर भेज दिया। ये बालक यहाँ वन में भटक रहे है। मन्त्री ने सारी बाते राजा को बतला दी। रानी का भेद खुल गया। राजा ने तब उसे सजा दी। वह मृत्यु को प्राप्त हुई और नागिन का जन्म पाया। अब अपने अपमान का बदला लेने के लिए वह इसी ओर क्रोध में फुंकारती हुई चली आ रही है। यदि ये राजकुमार जाग रहे हो तो इन्हे अपना बचाव कर लेना चाहिए। वरना निश्चय ही इनकी हानि होगी क्योकि नागिन क्रोध मे है और वह बदला अवश्य लेगी।"

बात जब समाप्त हुई तो देवी ने कहा—

"ओह·······यह तो इनके साथ बडा अन्याय हुआ !"

"हाँ अन्याय तो हुआ ही है। किन्तु तुम यह क्यो भूल जाती हो कि कर्म का फल भी व्यक्ति को अवश्य ही भुगतना पडता है। इनके पूर्व कृतकर्मों का ही प्रभाव है कि आज इन्हे वन में भटकना पड़ रहा है।"

बात समाप्त होने के पश्चात् विमान वहाँ से चल दिया। देखते ही देखते वह आँखो से ओझल हो गया। उदयभान, जो कि जाग रहा था और पहरा **देने में** तल्लीन था, देव द्वारा कही गई सारी बातो को था

वह समझ गया कि उसकी नई माँ पापकर्म के कारण मृत्यु को प्राप्त हुई और नागिन का जीवन पाकर अपना बदला लेने इसी ओर आ रही है। वह हम पर वार अवश्य ही करेगी। वह सोचने लगा—

'अगर मैंने जरा भी असावधानी बरती तो भारी हानि उठानी होगी। यदि बड़े भाई को जगा दूं, जो आराम कर रहे है, तो उनकी नीद में व्यवधान होगा, निद्रा भंग हो जायेगी। नही, मैं इन्हें नही जगाऊँगा। मैं भी तो राजवंश का वीर-पुत्र हूँ। मेरे शरीर मे भी तो एक वीर राजा का खून दौड रहा है। मैं अपनी और अपने भाई की रक्षा करने में समर्थ हूँ।' और वह अपने बचाव के लिए लाठी खोजने लगा। उसे दूर ही पडी लाठी दिखा दी। उसे लेकर वह तैयार हो गया। भयानक अँधेरी रात में सांय-सांय करते हुए नागिन क्रोधवश फुंकारती हुई तथा अपने फन को पछाड़ती हुई तत्काल ही वहाँ आ पहुँची। नागिन को देखकर उदयभान सचेत हो गया। राजकुमार को देख नागिन के मन मे क्रोध और भड़क उठा। वह कुमार पर वार करने के लिए उस पर झपटी। राजकुमार ने अपनी लाठी सम्हाली और उसे लाठी से दूर फेक दिया। बार-बार वह नागिन उस पर वार करने के लिए टूट कर गिरती रही और राजकुमार उदयभान अपनी चतुराई से उसे दूर फेकता रहा। काफी समय तक दोनों में संघर्ष चलता रहा। इधर नागिन की फुंकार और कुमार पर झपटने की आवाज और उधर कुमार द्वारा जमीन पर टकराई गई लाठी की आवाज रात्रि की

यानकता को और भी भयानक बना रहे थे। नागिन ने
हुत प्रयत्न किया कि वह कुमार पर वार कर सके किन्तु
ाजकुमार ने वडी ही सूझ-बूझ से हर वार बचा लिया।
ाहसपूर्वक कुमार ने लाठी का भरपूर वार नागिन पर
र दिया और नागिन घायल होकर वही भूमि पर तड़पने
ागी और कुछ ही समय पश्चात उसके प्राण निकल गये।
व उदयभान ने लाठी से उस पर वार किया तव नागिन
शरीर से कुछ रक्त की बूँदे उछलकर उदयभान के
रीर पर गिर गयी। वे रक्त की बूँदे जहरयुक्त थी। अतः
दयभान के शरीर मे जहर का प्रभाव होने लगा। नागिन
ी वदला लेने की भावना तो उसके मरते ही समाप्त हो
ई किन्तु साथ ही राजकुमार भी विषयुक्त रक्त के प्रभाव
न वच पाया। अचेत होकर वही भूमि पर गिर पड़ा।

रात्रि का समय धीरे-धीरे गुजर गया। सूर्य ने अपनी
करणे चारों ओर फैला दी। धूप चारो ओर बिखर गई।
रभान निद्रा से जाग उठ वैठा। उसने अपने चारो ओर
ष्टिपात किया, उसकी निगाहें अपने लघु भ्राता उदयभान
ो तलाशने लगी। कुछ ही दूर पर उदयभान को भूमि पर
ड़ा देख सोचा कि शायद पहरा देते-देते निद्रावश सो गया
ोगा। ठीक है, कुछ और सो लेने दूँ। नीद पूरी हो
ावेगी। यही विचार कर वह कुछ समय और वैठा रहा।
ाफी समय पश्चात् भी उदयभान को उठता न देख वह
सके समीप आया। उसने निद्रा से जगाने के लिए आवाज
गाई किन्तु उदयभान के शरीर मे कोई हलचल नही
ई। तव वीरभान चिन्तित हो उठा। अचानक उसकी

नजर समीप ही मृत नागिन पर पड़ी और वह घबरा गया। उसे शंका हो गई कि शायद नागिन ने उसे काट लिया होगा तभी वह अचेत हो गया है। उदयभान का शरीर हिलाने और आवाज लगाने पर भी जब वह नही जागा तो वह समझ गया कि उदयभान अब मृत्यु को प्राप्त हो गया है। उसका दाहिना हाथ टूट गया है। सोचते-सोचते वह अधीर हो उठा। नैनो मे अश्रु कण आ गये और वह रोने लगा—'हाय कैसा विधाता का खेल! इतने कष्ट के पश्चात् भी हम जिये जा रहे थे और हर संकट को झेल रहे किन्तु काल को दया नही आई। अब मेरे छोटे भाई को भी मुझसे छीन लिया।' उदयभान का शरीर धीरे-धीरे श्याम होता जा रहा था। वीरभान समझ गया कि इसके शरीर में विष का प्रभाव हो गया है। वह और अधिक घबरा गया सोचने लगा—

'अब क्या उपाय करूँ? इस विकट वन में किसका सहारा लूँ और यह विष शरीर से कैसे उतारूँ? अब मैं अपने भाई को कैसे बचाऊँ?' वीरभान की स्थिति बड़ी दयनीय हो गई थी। उसका मन रो पड़ा, वह सोचने लगा कि—'इस संसार में किसी ने भी मेरा साथ नहीं दिया। माता भी छोड़कर स्वर्ग सिधार गई। पिताजी ने, नई माता ने और सभी ने हमें ठुकरा दिया। एक छोटे भाई पर ही पूर्ण विश्वास था तो आज इसने भी साथ छोड़ दिया।'

फिर रोते हुए अपने भाई की ओर देखकर बोला—"उठो भाई! मुझे तुम पर पूर्ण विश्वास था। तुम भी मुझे

बीच राह में छोडकर चल दिये। तुमने मुझसे क्यों मुँह मोड लिया ? तुम्हारे बिना अब मेरा जीवन कैसे चलेगा ? किसके सहारे मैं जीऊँगा ?"

बार-बार अपने भाई की ओर देखते हुए वीरभान रोता जा रहा था। वातावरण पूर्ण रूप से दुःखमय बन गया था। वीरभान की वेदना और रोना देखकर पत्थर भी हो तो वह पिघल जाता।

चिन्ता, दुःख और वियोग में वीरभान घबरा उठा और अचेत हो वही गिर पडा। काफी समय तक अचेत रहने के पश्चात वीरभान पुनः होश में आया।

कहा गया है कि जब तक कर्मोदय का अन्त नही हो जाता तब तक शुभ-अशुभ होता ही रहता है अर्थात् कर्म के फल मनुष्य को भोगने ही पड़ते है। काफी समय तक वीरभान ने रोने और विलाप करने के पश्चात सोचा कि —'अब रोने से क्या लाभ होगा ? मुझे कुछ न कुछ उपाय करना ही होगा तभी मेरा भाई उदयभान जीवित होगा अन्यथा नही। मुझे हिम्मत नही हारना चाहिये। नगर जाकर किसी वैद्य को दिखाना चाहिये। बस यही एक उपाय है।' यह सोच उसने उदयभान के अचेत शरीर को एक वस्त्र मे बाँध लिया और उसे उठाकर अपने सिर पर रख लिया। अब वह चल दिया किन्तु उसमें चलने का साहस न हो पाया। भूख तथा प्यास के कारण उसके पैर आगे बढने मे असमर्थ हो रहे थे। वह सोचने लगा कि इस प्रकार तो मैं अपने भाई को लेकर शहर तक नही पहुँच

सकता। इसे किसी वृक्ष की कोटर मे छिपाकर रख दूं
और मैं जितनी जल्दी हो सके नगर जाकर किसी वैद्य को
ही यहाँ बुला लाऊँ। यह विचार कर वह अपने भाई के
शरीर को वही पेड़ की कोटर में रख चल दिया। किन्तु दो
कदम चला होगा कि वापस अपने भाई के समीप आगया।
उसे देखने लगा, हाथो से छूने लगा, उसे पुकारने लगा।
उसका मन भाई को इस प्रकार छोडने को तैयार न था।
वह सोचने लगा कि यदि वन मे हिंसक पशु आकर इसे
खा जावेंगे तो क्या होगा? मेरा सारा परिश्रम व्यर्थ हो
जावेगा। फिर हिम्मत कर वह आगे जाता और पुनः लौ
आता। कुछ समय व्यतीत होने के पश्चात उसने अपने म
पर काबू पाया और नगर की ओर चल दिया क्योंकि अ
इसके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं था। वह चलत
जाता और बार-बार मुड़कर अपने भाई की ओर देखत
जाता। रोता हुआ वह दुःखी और भारी मन से नगर क
ओर चला जा रहा था। भूख-प्यास के मारे एक-ए
कदम चलना मुश्किल हो रहा था किन्तु चलना भी अ
आवश्यक था। चारो ओर भयानक वन, हिंसक पशुओं क
का भय किन्तु राजकुमार वीरभान हिम्मत कर चला ज
रहा था। मार्ग में आगे चलकर उसे कुछ शुभ लक्षण दिखा
देने लगे। उसे सन्तोष हुआ। प्रसन्न हुआ कि उसके भाई के
प्राणो की रक्षा हो सकेगी।

१०

काफी लम्बा मार्ग तय करने के उपरान्त एक सुन्दर नगर विशाला आया । नगर के बाहर घने वृक्षो से सुन्दर व वडा वगीचा था। नगर के निकट ही निर्मल और स्वच्छ जल से भरी सरिता वह रही थी। शीतल और स्वच्छ जल को देखकर वीरभान की प्यास तीव्र गति से बढ गई। वह तुरन्त तट पर गया अंजलि में जल ले अपने मुँह को धोया। जल को स्पर्श करने से उसके शरीर में शीतलता पहुँच गई, मन प्रसन्न हो उठा। उसने जल पीकर अपनी प्यास बुझाई, तत्पश्चात वह नगर की ओर चलने को तत्पर हुआ किन्तु समीप ही उसे सुन्दर उद्यान दिखाई दिया। जिसके पेड, पौधे, लता, पुष्प आकर्षक और मन प्रसन्न कर देने वाले थे। कुछ व्यक्ति इधर-उधर आते-जाते दिखाई दिए। सरिता के उस पार नगर दिखाई दे रहा था। दूर से ही ऊँचे-ऊँचे भवन बड़े आकर्षक लग रहे थे। इन सव को देखकर वीरभान प्रसन्न हुआ। कई दिनों के पश्चात उसे यह सव देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

उद्यान मे सुन्दर पेड़, पौधे, पुष्प एवं फलो को तथा घनी छाँव देखकर वीरभान का विचार कुछ देर तक विश्राम करने को हुआ। वह उद्यान मे जाकर वैठा किन्तु

उसको चैन नही पड़ा। उसे तो अति शीघ्र नगर में जाकर वैद्य को खोजना था तथा अपने साथ ले जाना था। ताकि उसके भाई उदयभान का उपचार हो सके और विष का प्रभाव समाप्त हो सके तथा वह पुनः हँसता हुआ दिखाई दे सके। अतः वह उठ कर जाने की सोच ही रहा था कि उसने देखा, सामने से एक हथिनी अपनी सूँड मे कलश लिये हुए उसी की ओर चली आ रही है, पीछे-पीछे सैंकड़ों नर-नारियों का समूह चला आ रहा था। हथिनी अपनी मस्त चाल से चलती हुई वीरभान के निकट आई और उसके ऊपर वह कुम्भ, जो अपनी सूंड़ में लिए थी, उल्टा कर दिया। सारा जल वीरभान को भिगो गया। वह आश्चर्यचकित था। तभी सभी नर-नारियों में हर्ष की लहर व्याप्त हो गई, सभी जय-जयकार करने लगे और कुछ हर्षातुर होकर नाचने और गाने लगे।

"महाराज की जय हो !"

"महीपाल की जय हो !"

"राजाधिराज की........"

"जय हो !"

चारों ओर जय-जयकार होने लगी। वीरभान आश्चर्य और घबराहट के कारण मूक खड़ा था और अचरज की निगाहो से देखने लगा। उस भीड़ में से एक व्यक्ति, जो राजसी पोशाक पहने था, कमर में तलवार लटक रही थी, वीरभान के निकट आया, झुककर अभिवादन किया और बोला—

"महाराज की जय हो! आप घबराइये नही। आज से आप हमारे राजाधिराज है।"

"मैं.........मैं........." वीरभान ने घबराहट में थूक निगलते हुए कहा।

"जी हाँ, आप आज से यहाँ के राजा हुए।"

"मैं और यहाँ का राजा........!"

"हाँ महाराज! हथिनी ने आपके ही ऊपर कुम्भ उलटा अतः आप ही विशाला के नये राजा हुए।"

वीरभान अब कुछ-कुछ बात समझने लगा था। उसकी समझ मे धीरे-धीरे सारी बात आने लगी। यह व्यक्ति शायद यहाँ का मन्त्री होगा। इस नगर का नाम विशाला है। ये यहाँ की प्रजा है। फिर भी और स्पष्ट जानने के लिए उसने पूछा—

"आप लोगो ने मुझे यहाँ का राजा क्यो चुना? क्या बात है? कृपा कर मुझे सारी बात स्पष्ट करके बतलाओ तो आपकी बड़ी ही कृपा होगी।"

"कृपा कैसी महाराज!" वह मन्त्री नम्रतापूर्वक बोला—"आप तो यहाँ के सर्वेसर्वा है। आप जैसा चाहेगे वैसा ही होगा। आप हुक्म करें हम उसका पालन फौरन करेंगे।"

मन्त्री ने सारी बात स्पष्ट कर दी—

"यह नगर विशाला है। यहाँ पर श्रीधर **नाम के** राजा राज्य करते थे। वे बड़े दयालु, न्यायप्रिय अ

को अपने पुत्र की भाँति समझने वाले थे। किन्तु उनके
भाग्य मे कोई संतान नही थी। अभी कुछ दिनो पूर्व वे
स्वर्गवासी हुए तब हमारे समक्ष यह प्रश्न खड़ा हुआ कि
हम किसे अपना राजा चुने ? किसे विशाला का महीपाल
बनावे ? तव सर्वसम्मति से निर्णय लिया गया कि हथिनी
को सजा-धजाकर उसकी सूँड़ में जल से भरा कुम्भ रख
दो। हथिनी वह कुम्भ जिस पर ढोलेगी वही यहाँ के राजा
होगे। और यही किया गया। पूरे नगर में हथिनी कुम्भ
लिए घूमती हुई निकली। सैंकड़ों व्यक्ति हथिनी के समक्ष
आये किन्तु किसी के भी भाग्य में यहाँ का राजा बनना
नही लिखा था। फिर वह हथिनी नगर से इस उद्यान में
आई, जहाँ आप बैठे थे और आप के ही ऊपर यह कुम्भ
ढोल दिया। आपके ही भाग्य में राजश्री थी। अतः आप
अव यहाँ के राजा हुए और हम आपकी प्रजा।"

"ओह.......यह बात है !"

"जी महाराज ! अव आप यहाँ से राजसभा के लिए
प्रस्थान करे और विशाला नगरी के सिंहासन पर विराज
मान होवे। आपका राज्याभिषेक किया जावेगा।"

वीरभान को ससम्मान हथिनी पर विठाकर बाजे-
गाजे के साथ राजसभा की ओर ले जाया गया। शुभ
मुहूर्त मे राज्याभिषेक किया गया। अव वह राजकुमार
वीरभान से राजा वीरभान हो गया।

वीरभान के पूर्वजन्मो में किये अशुभ कर्म और उनके
फल का अन्त आ गया था तथा उसके पुण्योदय का प्रारम्भ

ही गया था। समय को बदलते देर नही लगती। कहाँ तो वह राजकुमार था और फिर अपने अशुभ कर्मों का फल भोगने वन में भटक रहा था। और देखते ही देखते आज विशाला का राजा बन गया। उसकी तकदीर एकदम चमक उठी। अपने आप ही उसे राजश्री प्राप्त हो गई। इसे पुण्य का फल ही कहा जावेगा क्योकि पुण्यवान जहाँ भी जावेगा अर्थात् जहाँ पर भी पाँव रखेगा वही पर स्वर्ग हो जावेगा, चारों तरफ खुशियाँ फैल जावेंगी। पुण्य से ही लक्ष्मी प्राप्त होती है और पुण्य से ही व्यक्ति को चारो ओर यश प्राप्त होता है, सम्मान मिलता है।

ऐसा ही राजा वीरभान के साथ हुआ। कुछ ही दिनों पश्चात उसका विवाह एक सुन्दर राजकुमारी के साथ सम्पन्न हो गया। अब वह पूर्ण मनोयोग और अपनी सूझ-बूझ से राज-काज सम्हालने लगा। अपनी न्यायप्रियता और दयालुता से वह सभी की प्रशंसा का पात्र बन गया।

उसके राज्य में न चोरी होती और न किसी के साथ अन्याय। सारे राज्य में सुख-शान्ति का साम्राज्य था। प्रजा भी ऐसे न्यायप्रिय एवं गुणवान तथा आदर्श शासक को पाकर खुश थी।

राजा वीरभान राजकाज मे ऐसा उलझा कि वह अपने छोटे भाई उदयभान को भूल ही गया। भूल गया कि वह यहाँ क्यो आया था। वह यह भी भूल गया कि वह अपने छोटे भाई उदयभान को अचेत अवस्था मे वृक्ष की कोटर मे छोड़ आया था। वह राजकाज मे लीन हो राज्य-सुख भोगने लगा।

एक दिन रात्रि के समय राजा वीरभान एवं रा
गहरी निद्रा में लीन थे। अचानक वह नींद से जाग उ
और उसने रानी को झकझोर कर जगा दिया।

"क्या है नाथ! आप""आप नींद से अचानक
जाग उठे?"

"ओह""""मुझे आज अपने छोटे भाई उदयभान
याद आ गई। किन्तु अब तो बहुत देर हो गई।"

"छोटा भाई उदयभान"""?" रानी ने आश्चर्य
पूछा।

"हाँ, मेरा एक छोटा भाई है जिसे मैं वन में छो
आया था।"

"लेकिन आप अपने साथ क्यों नहीं लाये उन्हें?"

"कैसे लाता? उसे नागिन का जहर चढ़ गया
वह अचेत था और मैं उठाकर उसे यहाँ तक नहीं
सकता था।"

"आप सारी बात मुझे बतलाइये।" रानी ने कहा।

"कहानी तो काफी लम्बी है। मैं किसी और दिन तु
सुनाऊँगा किन्तु अभी तो उदयभान के लिए मुझे कुछ कर
है। उसके शरीर से जहर उतारना है।"

"उन पर नागिन ने कब और कैसे वार किया?
कर मुझे बतलाइये। मुझे जानने की उत्सुकता है।"

"सुनो, मैं वन में रात्रि को विश्राम कर रहा था
मुझे नींद लग गई। भाई उदयभान पहरा दे रहा था

ास समय कही से नागिन आ गई। नागिन कही डस न
ा यह सोच वह उसे मारने को तत्पर हुआ होगा। दोनो
। एक-दूसरे पर वार किया होगा। नागिन उदयभान को
डसने में सफल हो गई और पश्चात् उदयभान ने नागिन
को मार डाला होगा। नागिन का जहर उदयभान के
शरीर में फैल गया। प्रातः जब मेरी नीद खुली तब मैंने
उदयभान को अचेत और समीप ही पडी मृत नागिन को
देखा। उदय के शरीर में विष का प्रभाव हो चुका था। मैं
उसे लेकर तत्काल शहर में वैद्य के पास उपचार के लिए
आने वाला था। किन्तु मैं उसे उठाकर चल नही पाया।
वही पेड की कोटर में उसे रख शहर की ओर चल पड़ा
और आगे का हाल तुम्हें ज्ञात ही है कि किस प्रकार मुझे
यहाँ का राजा बना दिया गया और फिर तुमसे विवाह हो
गया।"

वीरभान उदास होकर बोला—

"न जाने क्या हाल हुआ होगा उदय का ?"

"ओह········यह तो बहुत बुरा हुआ !"

"हाँ, मैं भी कितना स्वार्थी और कृतघ्न निकला कि
राजसुख में अपने भाई को ही भूल गया। भूल गया कि मैं
किस प्रयोजन से यहाँ आया था। मेरा भाई वन में अचेत
पडा है और मैं यहाँ सुकोमल शय्या पर आराम कर रहा
हूँ। नही, मुझे जाना चाहिए; मुझे तत्काल जाना चाहिए।"

"तो क्या आप अकेले ही जावेगे ?"

"मैं अकेला जाकर क्या कर सकता हूं। अभी तो **कुछ**

रात्रि शेष है तब तक मै सारी व्यवस्था करवा लूँ।
होते ही यहाँ से रवाना हो जाऊँगा।"

"हाँ, यह उचित ही होगा।"

राजा वीरभान ने तत्काल प्रहरी को बुलवाया
आदेश दिया कि वह राजवैद्य को बुला लावे। सा
जहर उतारने की औषधियाँ भी। वैसा ही हुआ।
होते ही राजा वीरभान राजवैद्य तथा कुछ सैनिक
पर सवार होकर चल दिये।

मार्ग मे वीरभान सोच रहा था कि 'न जाने
हाल हुआ होगा मेरे भाई का? मुझे कितने दिन
आये हो गये? इस बीच यदि उदयभान का शरीर
कि चेतनाहीन था, शेर, चीता आदि जंगली पशुओं
खा लिया होगा तो क्या होगा? मेरा भाई हमेशा-ह
के लिए मुझसे दूर हो जावेगा।'

विचार आते ही राजा वीरभान ने अपना घोडा
तेज दौड़ा दिया। वह शीघ्र ही उदयभान के पास
जाना चाहता था। राजा के पीछे-पीछे सभी ने अपने
को दौडाना शुरू कर दिया। घोड़ो की टापे चारो
गूँजती जा रही थी।

कुछ ही समय पश्चात् राजा वीरभान उस स्थान
पहुँच गया जहाँ पर वह अपने छोटे भाई को छोड़
था। राजा वीरभान अपने घोड़े से उतरा। वह उस
के समीप पहुँचा जहाँ वह अपने भाई को कोटर में
अवस्था में छोड़ गया था। उसने कोटर में देखा—उ
भान वहाँ नही था। वह अधिक घबरा उठा। उसने

ने आस-पास और दूर-दूर तक उदयभान की तलाश की किन्तु उसे उदयभान कही भी दिखाई नही दिया। वह पागलो की सी स्थिति में रोता जाता और अपने भाई को पुकारता जाता; इधर-उधर खोजता जाता। उसकी दयनीय दशा देख राजवैद्य तथा अन्य सैनिको की आँखो से भी अश्रु निकल आये। थक-हारकर राजा वीरभान एक स्थान पर बैठ गया। वैद्य ने उसे समझाया तथा वापस चलने के लिए आग्रह किया। काफी समय पश्चात् राजा वीरभान उठा और घोड़े पर सवार होकर वापस चल दिया। पीछे-पीछे राजवैद्य और सैनिक घोड़ो पर सवार होकर चले जा रहे थे। घोड़ो के चलने की गति बहुत धीमी थी। □

११

जब वीरभान अपने छोटे भाई उदयभान का शरीर अचेत अवस्था में छोड़कर शहर की ओर चल दिया था तो उसके जाने के कुछ ही समय पश्चात दो व्यक्ति वहाँ आ पहुँचे। ये दोनों व्यक्ति वैद्य थे, जो राह की थकान मिटाने के लिए उसी पेड़ की छाँव में बैठ गये।

जिसका भाग्योदय होना होता है, उसकी सहायता
लिए कोई न कोई अवश्य ही आ जाता है। ऐसा ही उद
भान के साथ भी हुआ। उसे अभी और जीवित रहना थ
अतः पुण्य ने उसका साथ दिया और उसकी किस्मत
वैद्य वहाँ आ पहुँचे।

वे बैठे ही थे कि उनमें से एक की निगाह उदयभा
के शरीर पर गई। वह तत्काल अपने साथी से बोला—

"अरे·······देखो तो, वहाँ पेड़ की कोटर में क्या है?

दूसरा देखकर आश्चर्य से बोला—

"यह तो किसी मानव का शरीर है।"

"यह जीवित है अथवा मृत ?"

"चलो पास चलकर देखें।"

दोनों वैद्य उदयभान के पास आ पहुँचे, ध्यानपूर्व
देखने के पश्चात पहला साथी बोला—

"इस सुन्दर बालक के शरीर में तो विष का प्रभा
हो गया है और इसी कारण यह अचेत है।"

"हाँ, किन्तु इसे इस अवस्था में कौन छोड़ ग
होगा ?"

"कोई भी छोड़ गया होगा किन्तु हमें अपना कर्त्त
पूर्ण करना चाहिये क्योंकि मानव सेवा करना ही मनु
का धर्म है।"

"हाँ चलो, शीघ्रता से इसका जहर उतारें।"

उदयभान की किस्मत ही थी कि उनके पास जड़
बूटी आदि विष उतारने का सामान था। उन्होंने औषधि

के प्रभाव से तत्काल विष शरीर के बाहर खींच निकाला। कुछ तरल पदार्थ, जो कि औषधि थी, उसके मुँह में डाल दिया। उसके शरीर पर एक विशेष तेल की मालिश की और फिर पैर के तलवे तथा हथेलियों की मालिश करने लगे। औषधियो का प्रभाव त्वरित गति से होने लगा और शनैः-शनैः उसके शरीर में उष्णता आने लगी। कुछ समय पश्चात राजकुमार उदयभान ने धीरे-धीरे आँखें खोली। उसके शरीर में हलचल हुई। उसने इधर-उधर देखा, वह कुछ भी समझ नही पाया। धीरे-धीरे वह उठा तब उसकी निगाह पास ही वैठे दो व्यक्तियों पर गई। तव उदयभान ने उनसे पूछा—

"आप........लो........ग कौन....है ?"

"हम वैद्य है। तुम्हें अव आराम तो है ?"

"मुझे........हाँ अव आराम है। किन्तु मुझे क्या हो गया था ?"

"तुम्हारे शरीर मे विष का प्रभाव हो गया था।"

विष का नाम सुनते ही राजकुमार को सारी घटना का स्मरण हो आया। तव उसने इधर-उधर निगाह घुमाई।

"क्या खोज रहे हो वालक ?"

"मेरा भाई।"

"कौन तुम्हारा भाई ?"

"मेरा बड़ा भाई। वह........वह तो यही विश्राम क रहा था।"

सुनकर वैद्य ने कहा—

"जब हम यहाँ पर आये उस समय तो यहाँ कोई नही था।"

"ओह............!" उदयभान पुनः बैठ गया और चिन्तातुर होकर बोला—"तब वह कहाँ चला गया?"

"चिन्ता मत करो। यहीं कही होगा, आ जावेगा।"

उदयभान ने वैद्य से पूछा—

"आप लोग कहाँ के रहने वाले हैं तथा कहाँ ज रहे है?"

सुनकर वैद्य ने कहा—

"हम बसन्तपुर के निवासी हैं। हम वैद्य हैं, तथा जड़ी बूटी के ज्ञाता हैं। यह तो तुम्हारी किस्मत ही ठीक थ कि हम यहाँ से गुजरे और तुम्हें देख लिया। हम विशाल नगर से आ रहे हैं और यहाँ विश्राम करने के लिए र गये थे।"

"आपने मुझ पर बहुत बड़ा उपकार किया अन्यथ मैं तो निश्चय ही मृत्यु को प्राप्त हो गया होता। आपक यह उपकार मुझे जीवन पर्यन्त स्मरण रहेगा।"

"उपकार, यह तो कोई उपकार नही। मानव-सेव तो प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है। प्रत्येक मानव को अप जीवन परोपकार और दूसरो की सेवा में लगाना चाहिये वही मानव अन्त में सुखी होता है जो परोपकारी होता है वैसे तो सभी मानव सेवा करते है, कुछ ज्यादा कुछ कम

कुछ ही होंगे जो मानव सेवा से मुँह मोड़ लेते हैं। ऐसे व्यक्तियों को तो पेड-पौधों और पशु-पक्षियों से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। तुमने देखा ही है कि पेड़-पौधे भी तो दूसरों के लिए ही फलते-फूलते हैं। सरिता बहती है वह भी दूसरों के लिए और जो स्वार्थ की ही सोचता है वह मानव नही है। मनुष्य जीवन पाकर जो दूसरो के काम नही आता है और जो धर्म का पालन नही करता है वह पशु से भी निम्न कहलाता है। उसके कार्य की कभी भी प्रशंसा नही होती। संसार में वही महान है जो परोपकारी है और अपना जीवन दीन दु:खियो की सेवा में व्यतीत करता हो।"

"धन्य मेरे भाग्य जो आपके दर्शन हुए।"

"धन्य तो हम हुए जो हमें मानव सेवा का अवसर मिला।" वैद्यो ने कहा और फिर उदयभान की ओर ध्यान-पूर्वक देखते हुए बोले—"तुम्हारा सुन्दर मुख, चौड़ा मस्तक, विशाल नेत्र और सशक्त भुजाओ को देखकर लगता है कि निश्चय ही तुम उच्च कुल से सम्बन्धित हो। तुम कही के राजकुमार तो नही ?"

"ठीक पहचाना आपने।"

"राजकुमार, और यहाँ वन में ?" वैद्य ने आश्चर्य से कहा—"तुम्हारे साथ क्या घटना घटी हमें बताओ।"

तब उदयभान ने आप-बीती संक्षेप में कह सुनाई। सुनकर वैद्य भी दु:खी हुए—

"ओह.........! इस उम्र में इतने कष्ट ! धन्य है तुम्हारी सहनशीलता और धन्य हैं तुम्हारे माता-पिता !"

"यह तो सब कर्मों का ही फल है।"

"हाँ ठीक है, कर्मोदय से ही सुख और दुःख प्राप्त होते है।"

"अच्छा राजकुमार अब हम चलते हैं।"

"ठीक है।"

राजकुमार ने उन्हें धन्यवाद देकर प्रणाम किया। वे उठे और अपनी राह चल दिये। राजकुमार कुछ समय अपने भाई के आने की राह देखता रहा। जब वह निराश हो गया तब उठा और भाई वीरभान की खोज में निकल पड़ा। चलते-चलते मध्यान्ह का समय हो आया। भाई की तलाश में वह इधर-उधर भटकता रहा किन्तु वन में पेड़, पौधे, पशु, पक्षी के अतिरिक्त उसे कोई भी नहीं मिला। इस आशा से कि उसका भाई मिल जावेगा वह फिर भी वन में भटकता ही रहा।

शाम हो गई। सूर्य अस्ताचल की ओट में अपनी दिन भर की यात्रा समाप्त कर अस्त होने की तैयारी में था। धीरे-धीरे अंधेरा चारो ओर बढ़ने लगा। उदयभान थक-हार कर एक पेड़ के नीचे बैठ गया। भूख एवं प्यास के के कारण उसका बुरा हाल था। समीप ही उसे एक झरना दिखाई दिया। वह उठा और झरने के पास पहुँच गया। उसने अपना मुँह-हाथ धोया और पश्चात अपनी प्यास

बुझाई। पानी पीकर उसे कुछ संतोष हुआ। वह उठा और रात्रि विश्राम के लिए उचित स्थान खोजने लगा।

प्रातः जब उदयभान की आँखें खुली तब प्रकाश चारो ओर फैल गया था। मन में विचार किया कि—'वन में भटकने से क्या लाभ? अब मेरा भाई यहाँ नही मिलेगा। मुझे किसी शहर में चलना चाहिये। हो सका तो वही से कुछ सुराग मिलेगा। हो सकता है कि मुझे अचेत देख वह मेरे लिए औषधि आदि लेने के लिए किसी नगर मे गया हो और वहां किसी विपत्ति मे फँस गया हो। जो भी हो, मुझे अब किसी नगर में जाकर भाई की तलाश करनी चाहिये।'

उदयभान नगर की ओर चल दिया। चलते-चलते सामने एक नगर दिखाई दिया। वह नगर के समीप पहुँचा। उसे कुछ व्यक्ति दिखाई दिये, जो अपने कार्यों में लीन थे। उनमें से एक व्यक्ति से उदयभान ने पूछा—

"भाई! यह कौन सा नगर है?"

"विशाला।"

"बडा सुन्दर नगर है। यहाँ के राजा का क्या नाम है?"

"यहाँ के राजा का नाम वीरभान है। जो अभी नये राजा बने हैं।"

"वीरभान ......!"

नाम सुनकर उदयभान कुछ चकित हुआ। उसके मन मे विचार आया—'कही मेरा भाई वीरभान ही तो यहाँ

का राजा नहीं बन गया।.........यह कैसे हो सकता है?....
....और यह अगर सच है तो बडी खुशी की बात है।
लेकिन मुझे शंका का समाधान कर लेना चाहिए।' उसने
पुनः पूछा—

"महाराज के दर्शन लाभ कर सकता हूँ?"

"हाँ-हाँ क्यों नही? अभी कुछ समय बाद महाराज
की सवारी नगर भ्रमण के लिए निकलेगी तब आप उन्हें
देख सकते है।" उन व्यक्तियों ने कहा।

अब उदयभान बड़ी बेचैनी से प्रतीक्षा करने लगा।
वह शहर के मध्य चौराहे पर पहुँचा। सोचा, महाराज
यहाँ से अवश्य ही गुजरेंगे। कुछ ही समय पश्चात राजा
वीरभान की सवारी वहाँ आ पहुँची। महाराज हाथी के
ऊपर स्वर्ण जड़ित सिंहासन पर विराजमान थे। दो सेवक
उनके आस-पास खडे हुए चंवर ड़ला रहे थे। महाराज के
पीछे कुछ हाथी और घोड़े थे जिन पर राज्य के अन्य मन्त्री
आदि थे। उदयभान ने तब वीरभान को देखा। उसका
हृदय खुशी से उछलने लगा। वह असीम प्रसन्नता का
अनुभव करने लगा। वह सोचने लगा—'अहोभाग्य भाई
के! आज महीपाल बने हुए है। समय बदलते देर नहीं
लगती। अब भाई के अच्छे दिन आ गये।'

उदयभान भाई को देखकर खुश हुआ। यह सोचकर
कि कहीं भाई को नजर उस पर न पड़ जावे, वह भीड़ में
विलीन हो गया। उसने सोचा—"अभी मैं भाई वीरभान,
जो कि विशाला के राजा है, उनसे नही मिलूँगा। उनके

भाग्योदय हुआ किन्तु मेरा समय अभी मंद है। पहले मैं भी योग्य बनूं, धन-सम्पत्ति अर्जित करूं और धनवान बनने के पश्चात ही अपने भाई वीरभान से मिलूं तो ही आनन्द है।' ऐसा विचार कर उदयभान भोजन के लिए कुछ उपाय करने हेतु उसी नगर में घूमने लगा। □

१२

सन्ध्या का समय हो गया था। कुछ ही देर पश्चात् सूर्य अस्त हो गया। उदयभान को अचानक किसी मकान से रोने की आवाज सुनाई दी। वह उसी दिशा की ओर चल दिया जिधर से रोने की आवाज आ रही थी। पास जाने पर पता चला कि कोई वृद्ध महिला अपने मकान में बैठी रो रही है। उदयभान का मन उसका करुण क्रन्दन सुनकर पिघल गया। वह मकान के अन्दर चला गया। वृद्धा के समक्ष पहुँचकर उसने पूछा—

"माताजी! क्या बात है? आप क्यो रो रही हो?

वृद्धा ने उदयभान को देखा और वह पुनः जोर-जोर से रोने लगी। उसके नेत्रो से अविरल अश्रु बहने लगे।

उदयभान उस वृद्ध स्त्री के पास ही बैठ गया और स्नेहपूर्वक बोला—

"माताजी ! आपको कौन-सा कष्ट है ? कृपया मु बतलाइये । हो सका तो मैं आपकी सहायता करूंगा ।"

उदयभान के प्रेमपूर्ण शब्दो को सुनकर वृद्धा बोली—

"कुछ नहीं बेटा ! मैं अपनी किस्मत को रो रही हूँ ।"

"क्या बात है ? मुझे भी तो बतलाइये ।"

"क्या करोगे सुनकर ? यह सब तो मुझे ही भुगतना और भुगतूंगी ।"

"फिर भी आप कुछ तो कहो ।"

"तुम········तुम तो परदेशी लगते हो ! भला मैं······ अपने दुःख को तुम्हें क्यों बताऊं ? वह तो मेरे ही हिस्से आया है ।"

"माताजी ! आप तो मेरी माँ के समान हैं और आपका बेटा । क्या माँ अपने बेटे से कुछ छुपाती है ?"

"बेटा········!"

"हाँ, माँ ! मैं तुम्हारे बेटे की तरह हूँ । आप कृपा क मुझे बताएँ कि आपको क्या कष्ट है ? हो सका तो आपके काम आऊंगा ।"

"तो सुनो बेटा········!" वृद्धा कुछ सोचते हुए बोली- "वैसे तो भगवान का दिया मेरे पास सभी कुछ है । घ दौलत, मान-सम्मान, किसी बात की चिन्ता नहीं है किन्तु मुझे आज होने वाली दुःखद घटना की ही चि खाये जा रही है ।"

"दुःखद घटना········कौन-सी दुःखद घटना ?"

"वेटा ! मेरा एक ही पुत्र है। वह मेरी आँखों की योति है किन्तु........।"

"किन्तु क्या माताजी ?"

"आज उसका वलिदान है।"

"वलिदान ?"

"हाँ वेटा ! आज मेरी आँखो की ज्योति, मेरा बेटा झसे छीन लिया जायेगा।"

और वृद्धा जोर-जोर से रोने लगी। उसका रुदन सुन दयभान का दिल भी भर आया। वह पुनः बोला—

"धीरज रखिये माताजी, आप मुझे पूरी बात तलाइये। मैं कुछ करूँगा।"

"क्या करोगे वेटा ! जिसको मरना है वह तो मरेगा ी।"

"लेकिन आपके वेटे को कौन मारेगा ? क्या आपका ोई शत्रु है ?"

"नही वेटा ! हमारा कोई शत्रु नही, हमें किसी का ाय नही किन्तु यह तो राजाज्ञा है। इसका पालन नही रें तो राजा द्वारा पूरे परिवार को समाप्त कर दिया ावेगा।"

"राजाज्ञा ? कैसी राजाज्ञा ? क्या कारण है कि राजा ापके ऊपर नाराज हुए है ? यह तो विचित्र रिवाज है।" क कर पुनः वोला—"राजा ने यह आज्ञा क्यो दी ?"

तब दुखियारी वृद्धा वोली—

"बहुत समय पहले की घटना है—एक दिन राजा के खजाने में कुछ चोर घुस आये। उन्होंने राजकोष का धन चुरा लिया। चोर चोरी कर भाग ही रहे थे कि प्रहरी को पता चल गया। अन्य सिपाहियों की सहायता से चोरों को पकड़ने का प्रयत्न किया। चोर राजमहल से बाहर निकल गये थे। वे तो सभी भाग निकले किन्तु एक निर्दोष व्यक्ति पकड़ा गया। सिपाहियों ने निरपराध व्यक्ति को चोर समझ बहुत पीटा। बेचारे को इतना पीटा कि वह मृत्यु को प्राप्त हुआ। असमय मृत्यु को प्राप्त वह व्यक्ति राक्षस बन गया। अब उसने बदला लेने की ठान ली। वह अपनी दुश्मनी पूरे राज्य से निकालने लगा। प्रजा को जब उससे हानि पहुँचने लगी और कष्ट हुआ तो प्रजा घबरा उठी और राजा के पास पहुँची। राजा ने प्रजा का संकट हल करने के लिए एक यज्ञ का आयोजन किया और इस राक्षस से बचने हेतु कई प्रयत्न किये। यज्ञ के समय राक्षस उपस्थित हुआ और राजा से बोला—"राजन्! मैं वही निर्दोष व्यक्ति हूँ जिसे आपके सिपाहियों ने चोर समझ मार-मार कर खत्म कर दिया और मैं अपना बदला सभी से लूँगा। मैं सभी को सताऊँगा। आपकी प्रजा को मारता रहूँगा और अपनी भूख मिटाऊँगा।"

"अरे राक्षस! ऐसा करने पर तो बड़ा अनर्थ हो जायेगा। तुम ऐसा न करो।" राजा ने गिड़गिड़ाकर कहा।

"तब मैं अपना बदला किस प्रकार लूँगा ? अपनी भूख से मिटाऊँगा ?" राक्षस बोला।

"कुछ भी करो किन्तु प्रजा पर दया करो।"

"ठीक है, मैं ज्यादा अन्याय नही करूँगा किन्तु मेरी क शर्त है।"

"वह क्या ?"

"मेरे खाने के लिए नित्य एक व्यक्ति को भेजा ये।"

"नही-नही, प्रजा को हानि नही होनी चाहिए।"

"राजन् ! प्रजा को तो हानि होगी ही। मुझे खाने लिए भी तो कुछ चाहिए। नित्य एक व्यक्ति मेरे पास एगा तो मैं और किसी को भी नही सताऊँगा।"

राजा कुछ सोचते हुए बोला—

"ठीक है, ऐसा ही होगा।"

"और सुनो राजन् ! जिस दिन मेरे पास कोई व्यक्ति ही आया और मैं भूखा रहा तब समझ लो कि एक साथ ई व्यक्ति मारे जावेंगे।"

इतना कह वह राक्षस वहाँ से चला गया।

वृद्धा ने यह सारी बात उदयभान को बतलाई और ह पुनः रोते हुए बोली—

"बेटा ! राजा ने तब सारे राज्य में डूंडी पिटवा दी क प्रत्येक घर से एक व्यक्ति नित्य राक्षस के पास

वृद्धा ने आश्चर्यचकित हो उदयभान की ओर देखा और बोली—

"तुम, तुम जाओगे अपना बलिदान देने ?"

"हाँ माताजी ! मैं जाऊँगा । आप चिन्ता न करें। आपका बेटा जीवित ही रहेगा और उसे कोई भी हानि नहीं होगी ।"

"लेकिन बेटा ! तुम तो परदेशी हो, तुम्हें मेरे दुःख से क्या प्रयोजन ? हमारे लिए तुम अपना जीवन क्यों त्याग रहे हो ? तुम्हारे भी तो माता-पिता होंगे ? क्या उन्हें तुम्हारी चिन्ता नहीं होगी ? क्या बीतेगी तुम्हारी माँ के ऊपर जब उन्हें पता चलेगा कि तुम मारे गये हो ।"

"माँ ! तुम भी तो मेरी माँ के समान हो और तुम्हारा बेटा मेरे भाई के समान है । क्या मैं अपनी माँ और भाई के काम नहीं आ सकता ? क्या मैं आपका दुःख दूर नहीं कर सकता ?"

"नहीं-नहीं, तुम नहीं जाओगे । वहाँ से कोई जिन्दा बचकर नहीं आया। वह राक्षस तुम्हें मारकर खा जायेगा ।"

"कोई बात नहीं । फिर भी मेरा उद्धार ही होगा क्योंकि मैं धर्म का पालन कर रहा हूँ, परोपकार कर रहा हूँ । ऐसे में मुझे धर्म ही तारेगा ।"

वृद्धा यह नहीं चाहती थी कि उदयभान अपने जीवन का बलिदान दे किन्तु उदयभान ने निश्चित कर लिया था।

उसने बड़ी कठिनाई से वृद्धा को राजी किया और उस स्थान का पता जानने का प्रयत्न किया। तब वृद्धा उसे उस स्थान पर ले गई जहाँ पर प्रतिदिन एक व्यक्ति को अपना बलिदान देने आना होता था और आज वृद्धा के बेटे को आना था; किन्तु उस स्थान पर पहुँच गया एक ऐसा वीर बालक जो दूसरो के आँसू पौछकर सुख अनुभव करता है। जिसने अपना जीवन ही परोपकार में लगा दिया था, जो धर्म में अटूट विश्वास रखता था।

वहाँ पहुँचकर वृद्धा ने स्नेह से उदयभान को देखा और उसके सिर पर हाथ रखते हुए बोली—

"बेटा ! तुम्हारे माता-पिता........?"

"माँ ! मेरा कोई नहीं है। मैं अकेला ही हूँ और यह जीवन आपके काम आ जावे तो मैं अपने को धन्य समझूँगा। आप मुझे आशीर्वाद दो।"

वृद्धा ने प्रेम से उसके सिर पर हाथ फेरा। तब उदय-भान ने कहा—

"माँ ! अब, जाओ आप। धर्म आपकी और मेरी रक्षा करेगा।"

वृद्धा उसे बार-बार आशीर्वाद देती वापस अपने घर की ओर चल दी। मार्ग में वह सोच रही थी—'धन्य है इसका जीवन, यह परोपकारी सचमुच साधारण मानव नहीं, कोई महान पुरुष है। जिसने दूसरों के लिए जन्म लिया है। दूसरों की रक्षा के लिए मौत को गले लगाने

वीर धन्य है। ऐसे दयालु मनुष्य इस संसार में लाखों में एक ही है क्योकि अपना जीवन सभी को प्रिय है, भला कौन मौत को चाहेगा? किन्तु यह वीर कितने आत्म-विश्वास के साथ मौत के मुँह में जा रहा है।' यह सोच और उदयभान को धन्य समझती वह घर चली गई।

सच है जो परोपकारी है, जो धर्म का पालन करते हैं, उन्हे कौन मार सकता है। वे तो दूसरो के लिए ही जीते हैं और फिर शरीर का क्या, वह तो हाड़-माँस का पुतला एक दिन तो समाप्त होगा ही किन्तु आत्मा तो अमर है, वह तो शाश्वत है, उसे कोई नही मार सकता। उसे तो जल, अग्नि, अस्त्र-शस्त्र कोई भी तो हानि नही पहुँचा सकता।

निडर और धैर्यवान बालक उदयभान निश्चित स्थान पर अपना बलिदान देने बैठ गया। ऐसे संकट के समय उसका एक ही सहारा था और वह था धर्म। उसका धर्म में पूर्ण विश्वास था। धर्मनिष्ठ हो वह भक्ति में डूब गया। चारों ओर गहन अंधकार था। मध्य रात्रि का समय। उसी समय उस स्थान पर राक्षस आ पहुँचा जिसका शरीर और मुख अति भयानक था। विशाल काया, लम्बे बाल, अंगारे के समान लाल-लाल नेत्र, लम्बे-लम्बे और सशक्त हाथ-पाँव, मुँह से बाहर निकलते हुए दाँत। नुकीले और बड़े-बडे नाखून। बड़ा भयानक दिखाई देने वाला वह राक्षस वहाँ आकर खड़ा हो गया। उसने उदयभान को देखा तो बड़ा प्रसन्न हुआ। उदयभान आँख मीचे महामन्त्र नवकार के जाप मे लीन था। उसके चेहरे पर एक विशेष प्रकार का संतोष झलक रहा था।

"क्षमा करो, मुझे क्षमा करो, मैंने सैंकड़ों व्यक्तियों की
या की है। यह घोर पाप मैंने बदले की भावना से और
ज्ञानतावश किया। मुझसे बहुत पाप हुआ। मुझे क्षमा
रो।"

तब उदयभान ने अपने ध्यान से हटकर आँखे खोली
र राक्षस की ओर देखकर बोला—

"हे राक्षस! तुम तो मुझे मारने आये थे और अब
से क्षमा माँगते हो।"

राक्षस हाथ जोड़ते हुए बोला—

"नही, नही; मैं पापी हूँ और अब यह पाप नहीं
गा। मुझे क्षमा करो।"

"ठीक है, जाओ, तुम्हें क्षमा कर दिया किन्तु तुम्हें
ी एक बात माननी होगी।"

"कहिये, आपका कथन सिर आँखों पर।"

"तुमने हिंसा की है। कई व्यक्तियों को अकारण ही
र डाला और भारी पाप किया है। अरे मित्र! तुम
तो समझो और यह कुकर्म छोड़ो। तुम्हें समझना
हिये कि हिंसा करने वालो का अन्त बुरा होता है।
सा कल्याण को नही बल्कि अकल्याण को—दुःख देने-वाली
ती है। इसलिए तुम्हें हिंसा करना छोड़ देना चाहिये।"

उदयभान के मधुर वचनों को सुन उसका मन पुलकित
उठा। वह प्रसन्न होकर बोला—

"हे भाग्यवान मित्र! मैं आज और अभी से ही हिंसा

का त्याग करता हूँ और वचन देता हूँ कि भविष्य में कभी भी संहार नहीं करूँगा। अज्ञानतावश जो पाप मुझसे हुए है, मैं उससे भी दुःखी हूँ और प्रायश्चित्त के लिए भी तत्पर हूँ।"

"ठीक है, अब जाओ, प्रभु स्मरण करो। तुम्हारा कल्याण होगा।"

राक्षस वहाँ से प्रसन्न हो चला गया।

सच ही कहा गया है कि जहाँ-जहाँ पुण्यवान के पाँव गिरते है वहाँ चारों तरफ मंगलमय वातावरण बन जाता है। हिंसा दूर भाग जाती है और अहिंसा का राज्य हो जाता है। पुण्यवान उदयभान ने भी आज राक्षस को सद्‌मार्ग दिखाकर सैंकड़ों व्यक्तियों के जीवन को बचा लिया।

१३

राक्षस के चले जाने के बाद उदयभान निश्चिन्त हो आराम करने के लिए लेट गया। वह मन ही मन प्रसन्न था कि आज उसके द्वारा बड़ा भारी कार्य हुआ। एक ऐसा कार्य जिसके द्वारा अनेक व्यक्तियों को जीवन-दान मिल गया था। अब उसे किसी का डर नहीं था। सोते

चते उसकी आँख लग गई। प्रातः होने में अभी देर
। उदयभान गहरी निद्रा में था कि वहाँ कुछ चोर आ
ुंचे। उदयभान को देख वे सोचने लगे कि कोई राहगीर
, इसके पास अवश्य ही धन होगा। क्यों न इसे लूट
या जावे? ऐसा विचार कर वे उसकी तलाशी लेने लगे।
दयभान निद्रा में लीन था। जब चोरों को कुछ नही
ला तो उन्होंने क्रोध में आकर उदयभान को उठा
कट ही स्थित कुएँ में डाल दिया। उदयभान जाग गया
र सारी स्थिति समझ गया किन्तु वह घबराया नही।
सने सोचा—'सुख में जो फूले नही और दुःख में जो
र्म को भूले नही वही सच्चा पुरुष है।' सो उदयभान
कुँए मे गिरते ही नवकार मन्त्र का जाप करना शुरू
र दिया। नवकार मन्त्र जो सभी मन्त्रों में श्रेष्ठ है
सके जाप से ही कई घोर कष्टों का निवारण हो
ता है।

चोर जा चुके थे। सूर्योदय होने वाला था। पूर्व दिशा
लालिमा छा गई। इसी समय नगर का सेठ जयानन्द
त्य कर्म हेतु कुँए के समीप से गुजरा। उसके कान तक
वकार मन्त्र के जाप की ध्वनि पहुँची। वह आश्चर्य-
कित हो गया। उसने इधर-उधर देखा, कहीं कोई नही।
ब वह कुँए तक पहुँचा और अन्दर झाँक कर देखा। एक
न्दर चेहरा उसे दिखाई दिया। कुँए में पानी
न्तु वह उसमें डूबा नही। 'अहो महामन्त्र
सा चमत्कार है!' यही विचार कर सेठ ने कुछ
ो मदद के लिए बुलाया और कुमार

निकलवाया। उसे अपने घर ले गया। नहला-धुलाकर अच्छे वस्त्र पहनने को दियें। सुन्दर एवं स्वादिष्ट भोजन करवाया तब सेठ जयानन्द ने राजकुमार से पूछा—

"कहो भाई ! तुम कौन हो और कुँए में कैसे आ गिरे ?"

"यह तो सब अपनी किस्मत का चक्कर है।"

"मैं यही तो जानना चाहता हूँ कि तुम वहां कैसे जा पहुँचे ?"

"आपने मेरी जान बचाई, मुझे कुँए में से निकाला यह आपका मुझ पर बहुत बड़ा उपकार हुआ।"

कुमार का सुन्दर मुख और प्रेमपूर्ण बातें सुन सेठ मन ही मन प्रसन्न हुआ। उसने स्नेह से कुमार के सिर पर हाथ रख कहा—

"बेटा ! यह तो कोई उपकार नही। वह तो ठीक हुआ कि मैं आ पहुँचा जा नही तो तुम्हारा क्या होता यही सोच मैं परेशान हूँ। लेकिन बेटा ! तुम अपने बारे में भी तो कुछ बताओ।"

तब राजकुमार उदयभान ने बडे ही सन्तोष से अपने जीवन में घटित सारी घटना सेठ को सुना दी किन्तु यह नहीं बतलाया कि वीरभान ही उसका भाई है जो विशाला का राजा है। सारी कहानी सुन सेठ को उसके प्रति सहानुभूति हो आई। भाई और उसके त्याग को सुन आश्चर्य भी हुआ। इतनी सी उम्र में यह बालक कैसा परोपकारी और वीर निकला। धन्य है इसका जीवन !

सेठ-सेठानी के कोई सन्तान नही थी अतः उन्होंने कुमार को ही अपना बेटा मान लिया। दोनो जैन धर्म के उपासक थे, पिता-पुत्र की भाँति रहने लगे और धर्म का पालन करने लगे। सुबह-शाम बैठकर तत्व की बाते किया करते। सामायिक-प्रतिक्रमण करते तथा नवकार महामन्त्र का जाप करते। इस तरह उनके दिन सुख से व्यतीत हो रहे थे।

जहाँ पर संत, महात्मा और पुण्यवान के पाँव गिरते हैं, प्रसन्नता छा जाती है। कुमार के आते ही सेठ के यहाँ सुख का राज्य फैल गया। उसके व्यापार में दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि होने लगी। कहाँ तो निरन्तर घाटा हो रहा था और कहाँ अब उसका व्यापार वढ-चढ़ गया। लक्ष्मी की भारी कृपा हुई। सेठ-सेठानी कुमार को अपने पुत्र की भाँति स्नेह से रखते थे। उसकी हर इच्छा को पूरी करते थे। कुमार भी उन्हें माता-पितावत् सम्मान देता था।

समय गुजरते देर नही लगती। उदयभान को सेठ जयानन्द के यहाँ रहते-रहते कुछ वर्ष वीत गये। सेठ जयानन्द का व्यापार काफी वड़-चढ़ गया था। यह देख अन्य प्रतिद्वन्द्वी व्यापारी उससे जल उठे। वे चिन्तित हो गये थे कि कही इसके सामने हमारा व्यापार ठप्प न हो जावे। उन लोगों के मन मे ईर्ष्या उत्पन्न हो गई। उन्ही में से एक व्यापारी था मम्मणराम। वह दुष्ट स्वभाव का था। सेठ मम्मणराम पहले से ही जयानन्द से ईर्ष्या रखता था

और अब तो वह उसका व्यापार चौपट करने की सोचने लगा। उसके व्यापार को नष्ट करने पर तुल गया। सोचने लगा कि 'शत्रु उन्नति कर रहा है। और यह सब उस कुमार के कारण है। उसके आने से पूर्व तो सेठ जयानन्द को व्यापार में घाटा ही हो रहा था। यही इसकी उन्नति में सहायक है। अब मुझे कुमार को ही खत्म करना चाहिये अन्यथा मेरा शत्रु जयानन्द मुझे हर क्षेत्र में हरा देगा।'

दुष्ट मम्मण सेठ ने अपने कुछ समर्थकों को उक्त चिन्ता बतलाई और वे सब कुमार को समाप्त करने का विचार करने लगे। उन लोगों ने अपना जाल फैलाया। मम्मण सेठ ने कुमार से परिचय किया और घनिष्टता बढाई। कुमार इस दुष्ट की चाल समझ नहीं सका। एक दिन सेठ मम्मण राम ने कुमार से कहा—

"कुमार ! तुम तो बहुत ही बुद्धिमान हो। व्यापार की बारीकियो को तुम खूब समझते हो।"

"नही सेठ जी ! ऐसी बात नही, व्यापार को मैं क्या समझूँ यह तो मेरा पहला ही अनुभव है।"

"वाह क्या बात है मित्र ! तुम तो बड़े भाग्यवान हो। व्यापार में तुम्हारा कोई जवाब नही किन्तु एक बात है।"

"वह क्या ?"

"तुम जैसा होनहार व्यापारी और यहाँ········? य समझ में नही आता।"

"क्यो क्या बात है यहाँ ?"

"अरे भाई ! यहाँ क्या रक्खा है ? इस तरह यहाँ तो तुम पैसा नही कमा सकते ।"

"क्यों, यहाँ क्यो नहीं कमा सकता ?"

"भाई ! बात यह है कि व्यापार स्वदेश में नहीं हो सकता और अगर होता भी है तो अधिक लाभ नहीं । यदि हमें अधिक लाभ लेना हो तो हमें विदेश चलना चाहिये । वहाँ जाकर व्यापार करेंगे । कुछ समय रहकर अधिक धन कमावेंगे और वापस अपने देश लौट आवेंगे ।"

"किन्तु यहाँ मुझे किस बात की कमी है सेठ जी ? अर्थात् मेरे पिता समान सेठ जयानन्द जी ने मुझे सारी सुविधा दे रखी है । मुझे किसी भी बात की परेशानी नही है ।"

"अरे भाई ! यह सब तो सेठ जयानन्द का है । तुम्हारा अपना क्या है ? तुम्हे भी तो धन कमाना चाहिये । तुम्हारे पास धन-दौलत होगी तभी तुम सेठ कहलाओगे ।"

"नही सेठ जी ! आप गलत सोच रहे है । यह सारा धन सेठ जी का है उसी प्रकार मेरा भी है । जितना उपयोग सेठ जी कर सकते है मैं भी उसी धन से कर सकता हूँ क्योकि वे मुझे अपने पुत्र की भाँति चाहते हैं । जो मेरा है वह सेठ जी का है और जो सेठ जी का है वह मेरा है । हम मे कोई अन्तर नही है ।"

"वाह क्या बात है तुम्हारे प्रेम और त्याग की ! किन्तु फिर भी एक बात है ।"

"वह क्या ?"

"सेठ जयानन्द तुम्हें पुत्र तुल्य चाहते है। यह भी ठीक है कि उनके पश्चात सारी दौलत तुम्हारी ही है किन्तु मान लो कभी सेठ और तुम में मतभेद हो जावे, जो तुम चाहते हो वह सेठ जी नही चाहें और वे तुम्हें चलता कर दें अर्थात् तुम्हें अपने घर से निकाल दे फिर तुम्हारा अपना क्या रहेगा ? सेठ तुम्हारे सगे पिता थोड़े हो है। वे जब चाहें तुम्हें अपने घर से निकाल सकते है। ऐसे में अच्छा ही हो कि अभी से तुम उनसे अलग विदेश में रहकर कुछ धन कमाओ। तुम्हें भी तो धन-दौलत चाहिये और तुम्हारे पास धन-दौलत होगी तभी तो तुम सेठ कहलाओगे।"

इतना कहकर सेठ मम्मणराम अपनी बातो की प्रतिक्रिया कुमार के चेहरे पर देखने लगे। कुमार कुछ सोचने लगा। धन, दौलत, सेठ ये शब्द उदयभान के मस्तिष्क में तेजी से गूंजने लगे। वह सोचने लगा कि 'मुझे धन की आवश्यकता तो नहीं है, मैं सेठ जयानन्द जी के घर में सुखी हूँ, सभी सुविधाएँ मुझे प्राप्त हैं। वह तो किसी प्रकार सेठजी मिल गये, मुझे घर ले आए और अपना पुत्र मान लिया तो मुझे सारी सुविधाएँ मिल गईं और यदि ऐसा न भी होता तो भी कोई बात न थी जिस प्रकार मेरा जीवन गुजरता गुजार लेता। मेरा भाई·······।'

भाई की याद आते ही उदयभान को विचार आया कि भाई के पास जाने के लिए मैंने सोचा था कि कुछ बनूं फिर जाऊँ किन्तु·······रुपया पैसा·······

अब उदयभान सोचने लगा, उसे भी तो धन दौलत चाहिये, वह भी तो सेठ तथा बड़ा आदमी बनना चाहता है क्योंकि वह चाहता था कि भाई के समान ही सक्षम होने के पश्चात ही उनसे मिलूँ और इसके लिए धन की अधिक से अधिक आवश्यकता थी। उदयभान ने सेठ मम्मणराम को विदेश चलने की स्वीकृति दे दी।

उदयभान ने जब विदेश जाने की बात सेठ जयानन्द को बतलाई तो वे बोले—

"बेटा! हमारे पास क्या धन की कमी है जो तुम विदेश जाने की सोच रहे हो?"

उदयभान ने प्रेमपूर्वक कहा—

"धन की कमी तो नही है किन्तु क्या नुकसान है यदि और धन कमाया जावे?"

"नही, नही, मनुष्य को लालच नही करना चाहिये। जितना मिले उतने मे ही सन्तोष करना चाहिये। हम दोनों समय अच्छा भोजन कर रहे है और अच्छे वस्त्र पहन रहे है, सभी सुविधाएँ हमें प्राप्त है। भला हमे और क्या चाहिये। किस बात की कमी है हमारे पास?"

"कमी तो नही है किन्तु फिर भी·······।"

सेठ जयानन्द प्रेमपूर्वक बोले—

"किन्तु क्या बेटा!"

"यदि·······मैं यह चाहता था कि अपने व्यापार को और बढ़ाया जावे तथा और धन कमाया जावे। मान लो

आज हमारे पास जो है वह कल अगर बुरा समय आया और यह नही रहा, अभी जो धन है वह सब चला गया तो हम जो अतिरिक्त धन कमावेंगे वह हमारे काम आवेगा।"

सेठ जयानन्द कुमार की ओर गौर से देख रहे थे। वे समझ रहे थे कि यह विदेश जाने को तत्पर है तभी अतिरिक्त धन की बात कर रहा है। यह अच्छी तरह से जानता है कि अगर बुरा समय आवे तो यह और वह धन सभी जाता रहेगा। फिर भी वे समझाने के लिए बोले—

"बेटा ! तुम्हारी यह बात तो मेरी समझ में नही आई। मान लो अगर बुरे दिन आए और हमारा व्यापार ठप्प हो गया। हमें घाटा हुआ और इतना घाटा हुआ कि जो है सो सब चला गया तब वह अतिरिक्त धन जो हमारे पास पहले होगा पश्चात बुरे समय में वह भी तो चला जावेगा। और अगर वह अतिरिक्त धन हमारे पास है तो फिर बुरे दिन हम कैसे मानें ? अगर जाना होगा तो सब कुछ चला जावेगा।"

उदयभान समझ गया था कि अब कुछ कहना उचित न होगा। यद्यपि वह चाहता था कि विदेश जाय किन्तु इस समय वह चुप ही रहा। वह सोच नही पा रहा था कि किस प्रकार जाने की आज्ञा प्राप्त करूँ।

सेठ जयानन्द पुनः बोले—

"क्या तुम अकेले ही जा रहे हो ?"

"नही।"

"तब, तुम्हारे साथ कौन जा रहा है ?"

"मैं सोच रहा हूँ कि परदेश में अकेले जाना ठीक नही और वह भी फिर व्यापार का मामला।"

"इसीलिए तो पूछ रहा हूँ कि तुम्हारे साथ और कौन जा रहा है ?"

"सेठ मम्मणराम भी चलेंगे।"

"क्या……..?"

"हाँ, वे व्यापार में कुशल है अतः…… …।"

"कुशल ! अरे धूर्त कहो धूर्त !"

"क्यों, वे तो……..?"

"ओह…….अब समझा……..।"

सेठ जयानन्द कुछ सोचते रहे फिर बोले—

"विदेश जाने की बात तुम्हारे मस्तिष्क में कैसे आई ?"

"सेठ मम्मणराम ने ही यह सलाह दी।"

"तुम्हारी स्पष्टवादिता से मैं बहुत प्रसन्न हूँ किन्तु एक बात बता देता हूँ कि यह सेठ है ना……..।"

"कौन, मम्मणराम ?"

"हाँ……..मम्मणराम बड़ा नीच प्रवृत्ति का है।"

"नहीं-नही, वे तो बड़े अच्छे है।"

अब सेठ जयानन्द सारी बात समझ गये। वे समझ गये कि यह सारी चाल मम्मण की ही है। वह उदयभान

को हटाना चाहता है और मेरे व्यापार को नष्ट करना चाहता है सो वे बोले—

"बेटा ! सेठ मम्मणराम अपना मित्र नहीं बल्कि शत्रु है। तुम इसकी बातो में किस प्रकार आ गये ? यह तो विश्वास करने लायक व्यक्ति है ही नही। इसमें मुझे तो कुछ चाल ही दिखाई पड़ती है।"

"चाल ! ....भला वह हमारा बुरा क्यों चाहेगा ?"

"अरे बेटा ! वह हमारा शत्रु है। वह नहीं चाहता कि हम उन्नति करें। वह हमें नीचा दिखाना चाहता है।"

"नही, मुझे तो वह भला आदमी मालूम पड़ता है।"

"तुम अभी नादान हो। व्यापार की बारीकियों को नही समझते हो और व्यापार में सहज ही दूसरों पर विश्वास करना भी धोखा है।"

कुछ देर चुप रहने के बाद सेठ जयानन्द पुनः बोले—

"मैं तो चाहता हूँ कि तुम यही रहो और यहाँ का ही काम-काज देखो।"

"किन्तु........मैं........मैंने तो जाने का निश्चय ही कर लिया है।"

"कुमार ! तुम.... ....।"

सेठ जयानन्द उसके विचार को सुन चकित रह गये। अन्तिम बार उन्होंने समझाते हुए कहा—

"कुमार ! अगर तुम सारा कारोबार स्वयं अपने हाथ में लेना चाहते हो तो यह सब तुम्हारा ही है। तुम्हे अगर अपने व्यक्तिगत कार्य हेतु रुपया पैसा चाहिये तो भी यह

सब पूँजी तुम्हारी ही है। मैंने तुम्हे अपना पुत्र समझा है। तुम जो चाहो और जितना चाहो ले सकते हो क्योकि यह सब अन्ततः तुम्हारा ही है और तुम्हे ही सम्हालना है।"

"नही मैं ऐसा नही चाहता। मैं धन-दौलत लेकर क्या करूँगा ?"

"तो फिर और अधिक धन के लालच में तुम कैसे आ गये ?"

उदयभान कुछ नही बोला। सेठ जयानन्द समझ गये कि कुमार अपना निश्चय नही बदलेगा। अतः विवश हो उन्होने विदेश जाने की आज्ञा दे दी। उदयभान को सेठानी ने भी बहुत समझाया किन्तु वह नही माना। उसे तो बस एक ही धुन सवार थी और वह थी धन कमाने की, बड़ा बनने की और उसके बाद कुछ बनकर अपने भाई विशाला के राजा वीरभान के समक्ष जाने की। सेठ जयानन्द से आज्ञा मिलने के बाद वह खुशी-खुशी विदेश जाने की तैयारी करने लगा।

निश्चित दिन उदयभान ने जाने से पहले सेठ जयानन्द के चरणों को छूकर आशीर्वाद लिया। सेठ ने उसके सिर पर हाथ रख कहा—

"जाओ बेटा ! मेरा आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ रहेगा। तुम संकट में भी धर्म को मत भूलना। वह हमेशा तुम्हारी रक्षा करेगा। और तुम....तुम शीघ्र लौट आना।"

इस समय सेठ जयानन्द, सेठानी तथा कुमार उदयभान तीनों की आँखें नम थी। □

१४

महासागर की लम्बी यात्रा। माल से भरा हुआ जहाज अपनी गति से चला जा रहा था। जहाज में उदयभान, सेठ मम्मण तथा उसके अन्य साथी सवार थे—वे साथी मम्मण की ही तरह दुष्ट प्रकृति के थे। सभी ने उदयभान के साथ चाल चली थी। वे उसे समाप्त कर देना चाहते थे और इसीलिए विदेश जाकर व्यापार करने का बहाना बनाया था। उदयभान भी उनकी बातों में आ गया और अब वे जहाज में सफर कर रहे थे।

सेठ मम्मणराम, उदयभान से बोला—

"कितनी सुहानी यात्रा है ?"

सुनकर उदयभान मुस्करा दिया। वह बोला—

"हाँ, बहुत ही सुखद है।"

"अच्छा हो कि हम कुछ मनोरंजन ही करें।"

"मनोरंजन ?"

"हाँ, मनोरंजन से समय भी कट जायेगा और मार्ग भी।"

"हाँ-हाँ, क्यों नहीं ?"

"तो फिर आओ हम जुआ खेलें।"

जुआ का नाम सुन उदयभान कुछ विचलित हुआ।

उसने कहा—

"यह खेल तो मुझे नही आता।"

"अरे, इसमे क्या है? सीधा-सादा तो खेल है। हम खेल खेलेंगे। इसमें शर्त रहेगी जो खेल में हारेगा वह शर्त भी हार जायेगा।"

"शर्त, कैसी शर्त?"

सेठ मम्मणराम ने कहा—

"भाई! शर्त विना तो जुआ अधूरा है।"

"ठीक है किन्तु यह वतलाइए कौन-सी शर्त रहेगी हमारे बीच?"

"भाई! जो हार जायेगा वह जहाज से उतर जायेगा और अपनी भुजा के वल पर तैरता हुआ यह यात्रा पूरी करेगा।"

विनाश काले विपरीत बुद्धिः। यही उदयभान के साथ भी हुआ। प्रथम तो उसने विदेश चलने की हाँ भर ली पश्चात जुआ खेलने की और शर्त भी स्वीकार कर ली।

खेल शुरू हुआ और समाप्त भी। चालाक और दुष्ट प्रकृति सेठ मम्मणराम के सामने उदयभान की एक नहीं चली। उदयभान हार गया और मम्मणराम जीत गया। अब उदयभान को शर्त के अनुसार जहाज से उतर जाना था। उसने विशाल फैले हुए समुद्र की ओर देखा। चारों ओर जल ही जल था। किनारा कही भी दिखाई नही दे रहा था।

किन्तु शर्त········।

मम्मणराम उसकी दशा देख बहुत प्रसन्न हुआ और बोला—

"भाई ! तुम शर्त हार गये।"

"हाँ, हार तो गया।"

"फिर अब जहाज से उतरो और तैरते हुए पहुँचो।"

"नही-नही, यह तो मुझसे नही हो सकेगा।"

"क्यो नही हो सकेगा ?"

उदयभान नम्रतापूर्वक बोला—

"चारो तरफ अपार जलशशि है और मैं इसमें तैरने के लिए असमर्थ हूँ। आप जीते, मैं हारा। इस बार मुझे माफ करो।"

जहाज में सवार सभी उदयभान की बात सुन और उसका चेहरा देख अट्टहास करने लगे।

उनके अट्टहासों और व्यंगभरी निगाहो को उदयभान न सह सका, वह तिलमिलाकर बोला—

"आप लोग हँसते क्यो है ? मैं जहाज से उतर जाऊँगा।"

"उतर जाऊँगा नही, अभी उतर जाओ।"

इतना कहने के साथ ही मम्मण और उसके साथी ने उदयभान को उठाया तथा समुद्र में फेंक दिया। उदयभान समुद्र में गिरा तब उसके कानो में उनके ठहाको की आवाज गूँज रही थी।

समुद्र मे गिरते ही उदयभान ने अपनी रक्षार्थ नवकार का जाप प्रारम्भ कर दिया। यही महामन्त्र अब उसे बचा सकता था। वह अपनी सशक्त भुजाओ से अपार जलराशि को चीरता हुआ आगे की ओर बढ़ने का प्रयास करने लगा और सेठ मम्मणराम का जहाज तेजी से बहुत दूर निकल गया।

मम्मण सेठ खुश था। उसकी राह का काँटा दूर हो गया था। उसका विश्वास था कि कुमार अब बच नहीं सकता है। किन्तु जिसको बचना होता है उसे कही न कही से सहारा मिल ही जाता है। जल और उसमें उठती लहरों को पार करता हुआ तथा नवकार मन्त्र का जाप करता हुआ वह आगे बढता गया। तभी एक मच्छ, जो राज-कुमार की तरफ ही आ रहा था, दिखाई दिया। विशाल काया, वड़ी-वडी आँखे। वह तेजी से राजकुमार की ओर ही आ रहा था। उदयभान ने मन्त्रोच्चारण जारी रखा। वह समझ गया था कि यह मच्छ उसे अवश्य ही निगल जायेगा, किन्तु अब क्या हो सकता था ? कर्मफल के अनुसार जो होना होगा वह तो होगा ही। यह सोच उदयभान आगे वढ़ता हो गया। किन्तु यह क्या....? नवकार मन्त्र का प्रभाव मच्छ पर अनुकूल ही हुआ। मन्त्र को श्रवण कर मच्छ ने अपने पूर्वजन्म का ज्ञान प्राप्त किया और वह समझ गया कि यह धर्मात्मा प्राणी अवश्य ही किसी के चक्कर में पडकर कष्ट उठा रहा है। अतः मच्छ ने सोचा कि इसकी सहायता करनी चाहिए। वह राजकुमार के निकट आ गया और राजकुमार के नीचे से इस तरह निकला कि

अचानक राजकुमार मच्छ की पीठ पर आ गया। अब मच्छ तेज गति से पानी को चीरकर आगे की ओर बढ़ने लगा। वह बार-बार कुमार की ओर देखता जाता मानो कुमार को सांत्वना दे रहा हो।

दो दिन तक यात्रा करने के पश्चात मच्छ एक द्वीप के निकट पहुँचा। किनारा देख वह प्रसन्न मुद्रा में उसकी पीठ से उतर गया और उस द्वीप के तट पर पहुँच गया। यह अंक द्वीप था। राजकुमार समुद्र के किनारे बैठ गया। भूख-प्यास से व्याकुल वह सोच रहा था कि यहाँ तक तो मच्छ की सहायता से आ पहुँचा हूँ किन्तु अब आगे क्या होगा? वह भविष्य की चिन्ता में डूब गया।

प्रातः का सुन्दर समय था। चारो ओर ठण्डी-ठण्डी हवा बह रही थी। वह सोचने लगा 'ऐसा सुन्दर प्रातः का समय प्रभु स्मरण करने का है। धर्म की आराधना करने का है। ऐसे समय सन्त और साधक ही नही, सद्‌गृहस्थ भी प्रभु स्मरण करते है। पूजा अर्चना करते है। मुझे भी प्रभु को ही याद करना चाहिए।' यह सोच वह भी धर्म ध्यान में लग गया। □

१५

अंकद्वीप धनधान्य से सम्पन्न था। उसकी प्राकृतिक छटा मन को मोह लेती। चारो तरफ हरियाली। उद्यानों

में खिले सुन्दर पुष्प, पेड़-पौधे बरबस मन को अपनी ओर खीच लेते। इस द्वीप में चारों ओर सुन्दरता का वातावरण फैला था। द्वीप के निवासी सभ्य और सदाचारी थे। सभी खुशहाल थे।

अंकद्वीप की राजधानी का नाम रत्नावती था। यथा: नाम तथागुण। वहाँ पर बहुमूल्य रत्नो की खाने थी। राजधानी बहुत बड़ा और सुन्दर नगर था तथा व्यापारिक केन्द्र भी। रत्नावती नगर में प्रजा सुख से अपना जीवन व्यतीत कर रही थी। अंकद्वीप के राजा का नाम वज्रसेन था। अपने नाम के विपरीत वह बड़ा दयालु तथा न्याय-प्रिय था। जैसा गुणवान राजा वैसी ही गुणवती रानी भी थी जिसका नाम विजया था। राजा की एक युवा पुत्री थी जिसका नाम विजयाकुमारी रखा गया था। विजयाकुमारी अत्यन्त रूपवती तथा बुद्धिमती थी। विजयाकुमारी किशोरावस्था को छोड यौवनावस्था मे प्रवेश कर चुकी थी अतः राजा को अब उसके विवाह की चिन्ता थी। वे योग्य वर की तलाश में प्रयत्नशील थे। वे चाहते थे कि विजयाकुमारी के लिए योग्य वर मिले जिसे वे अपना जामाता बनाये। पुत्र न होने के कारण वे योग्य एवं कर्तव्यनिष्ठ जामाता की खोज में थे।

राजा वज्रसेन ने अपने मन्त्रियों को चारों ओर भेजा था। मन्त्रीगण विभिन्न राज्यों में जा-जाकर विजयाकुमारी के लिए योग्य वर की खोज करने लगे किन्तु उन्हें
ही होना पडा। अब राजा भी निराश और दुःखी
एक दिन राजा वज्रसेन ने अपने राज-ज्योतिषी

वाया। ज्योतिषी राजदरबार में पहुँचा। राजा का अभिवादन कर उचित आसन पर बैठ गया। राजा ने ससम्मान उनका स्वागत किया। पश्चात राजा ने कहा—

"ज्योतिषाचार्य ! हम बड़े चिन्तित है। तुम्हें मालूम है हमारी एक ही कन्या है। वह भी विवाह योग्य। उसके लिए वर की तलाश हेतु हमने अनेक यत्न किये किन्तु हमें सफलता नही मिली।"

"मेरे योग्य क्या सेवा है महाराज !" नम्रतापूर्वक ज्योतिषी ने कहा।

"आप शास्त्र के अच्छे ज्ञाता है। कृपया बतलाइए कि विवाह का योग कब और कहाँ बनेगा ?"

"अच्छा, महाराज !"

ज्योतिषी के कुछ समय तक अपने ज्योतिष शास्त्र में भलीभाँति देखकर राज को बतलाया—

"महाराज ! कुमारीजी के विवाह का योग है।"

"योग है यह तो खुशी की बात है।" राजा ने प्रसन्न होकर कहा—"किन्तु यह योग कब बनेगा ?"

"छह मास के बाद।"

"क्या""छह मास के पश्चात ?"

"जी महाराज ! आज से छह मास के बाद और वह भी विजयाकुमारी के अनुकूल तथा आपकी इच्छानुसार होगा।"

"बडी खुशी की बात है।"

"जी महाराज !"

"किन्तु छह मास पश्चात हम उन्हें कहाँ खोजेंगे ?"

"महाराज ! आपको खोजने की आवश्यकता नही। आज से ठीक छह मास पश्चात माघ महीने की सप्तमी के दिन वह अंकद्वीप में आयेगा और समुद्र किनारे विश्राम करेगा। जिसका चेहरा राजकुमारो की भाँति होगा। वही युवक आपकी कन्या के लिए योग्य वर होगा।"

ज्योतिषी की भविष्यवाणी सुन राजा तथा सभी दरबारी प्रसन्न हुए। राजा ने तब उचित धन व सम्मान सहित राज ज्योतिषी को विदा दिया।

समय अपनी गति से भाग रहा था। माघ का महीना भी आ गया और सप्तमी भी। निश्चित दिन राजा वज्रसेन तथा मन्त्रीगण समुद्रतट पर जा राजकुमारी विजया के हेतु वर की खोज करने लगे। चलते-चलते उनकी निगाह एक युवक पर गई जो समुद्र किनारे विश्राम कर रहा था। ज्योतिषी के बताये अनुसार ही उस युवक का चमकता हुआ चेहरा, ऊँचा ललाट था। वे समझ गये कि यही वह युवक है। राजा प्रसन्न हुए। अब क्या था ? निकट जाकर राजा तथा मन्त्रीगणो ने राजकुमार उदयभान का पुष्पमाला से स्वागत किया। राजकुमार उन्हे देख चकित रह गया। तब राजा ने कहा—

"पधारिए, आपका स्वागत है, हम आपकी ही प्रतीक्षा मे थे।"

राजकुमार को आश्चर्य हुआ। वह पहले ही ठोकर खाया हुआ था और अपार कष्ट उठा चुका था अतः **अब**

वह कोई भी कदम भलीभांति सोच-विचार कर उठाना चाहता था। अतः उसने पूछा—

"मेरी प्रतीक्षा, वह क्यो ?"

राजा ने उसकी घबराहट को समझकर कहा—

"श्रोमान ! यह अंवद्वीप है और मैं यहाँ का राजा वज्रसेन हूँ। निमित्तज्ञ की भविष्यवाणी के अनुसार मेरी कन्या विजयाकुमारी का विवाह आपके साथ होना है। अतः आप राजमहल में पधारे और मेरी पुत्री के साथ विवाह कर जामाता बने और हमारी चिन्ता दूर करे।"

राजकुमार ने पहले सोचा कि यह कोई षड्यन्त्र न हो। वह अब पहले से अधिक सतर्क रहना चाहता था। अभी तक वह जहाँ भी गया उसे अपार कष्ट और यातनाएँ उठानी पड़ी थी। अपने ही घर में अपनी विमाता द्वारा उस पर चरित्रहीनता का दोषारोपण किया गया। उसके पिता राजा वीरधवल जो उसे अपने जीवन से भी अधिक चाहते थे, जिनकी आँख का वह तारा था, उन्ही राजा के द्वारा उसके वध का आदेश दे दिया गया। वह तो स्नेही, बुद्धिमान, चतुर एवं पितावत् मन्त्री सुमतिचन्द्र की ही बुद्धिमानी थी कि वह आज जीवित है अन्यथा वह कभी का परलोक सिधार गया होता। अपने ही घर से निकाले जाने के बाद उसने और उसके बड़े भाई वीरभान ने क्या-क्या कष्ट नही सहे ? भूखे-प्यासे वन-वन भटकना पड़ा। कहाँ तो राजकुमार का जीवन व्यतीत कर रहे थे, सारी सुख-सम्पत्ति इनके कदमों में थी और कहाँ मात्र जल और

वनो से प्राप्त फलो पर ही अपनी भूख को मिटाने पर विवश हो गये थे। वन में ऐसे घोर कष्ट उठाने पर भी विमाता को उस पर दया नही आई और वह अपना बदला लेने नागिन के रूप में आई। यहाँ पर उसके कर्म फल ही काम आये और समय पर अनजाने परोपकारी वैद्य आ पहुँचे जिन्होने मन्त्री सुमतिचन्द्र के पश्चात् दूसरा जीवन दान दिया। अपने भाई की खोज में वह दुखिया वृद्धा के घर जा पहुँचा और उसका दुःख दूर किया किन्तु फिर वह चोरो द्वारा कुएँ में डाल दिया गया और सेठ जी के प्रयत्न से वह फिर अपना जीवन सुखपूर्वक व्यतीत करने लगा। समाज में अच्छे विचारों के व्यक्ति होते है, वहाँ कुछ कुविचारो के व्यक्ति भी होते ही है। सज्जन एवं दुर्जन दोनो ही समाज में रहते है। सज्जन पुरुष तो दूसरो के लिए अपने मन मे सुविचार रखते है, दूसरो के हित का कार्य करते है किन्तु दुर्जन व्यक्ति अपनी प्रकृति और आदत से विवश हो दूसरो के सुख को नही देख सकते। वे तो हमेशा यही चाहते है कि सारा सुख और वैभव मुझे ही मिल जाए, मैं ही धनाढ्य हो जाऊँ और शेष व्यक्ति मुझसे निम्न जीवन व्यतीत करे अथवा वह चाहता है कि मैं अधिक से अधिक धनी व्यक्ति कहलाऊँ सो वह ऐसा चाहने में अपना हर सम्भव प्रयत्न करता है चाहे वह कार्य नैतिक हो या अनैतिक। वह पाप से नही डरता, हिसा पर उतारू हो जाता है। इसी चक्कर में आकर उदयभान समुद्र में जा गिरा था और फिर अपने कर्मों के फलानुसार वह अंक द्वीप में पहुँच गया था। कठिन

से कठिन परिस्थितियों में भी उसने धर्म को नहीं छोड़ा और अन्त में सफलता प्राप्त कर वह सुरक्षित समुद्र तट पर पहुँच गया था। अब उसके समक्ष यह समस्या थी कि अंक द्वीप के राजा वज्रसेन ने जो कहा, वह कहाँ तक सत्य है। अर्थात् मुझे इनकी बात पर विश्वास करना चाहिये अथवा नही। वह पुनः राजा से बोला—

"आप भली प्रकार से पूरे तट पर और खोज करवा लेवे। मेरे अतिरिक्त कदाचित और भी कोई होवे और हो सकता है कि वही वह व्यक्ति हो जिसकी आप सभी प्रतीक्षा में हों।"

राजा वज्रसेन जो बहुत समय से अपनी पुत्री विजया कुमारी के विवाह के लिए चिन्तित थे और अब उसके योग्य वर मिल जाने के कारण अत्यन्त प्रसन्न थे, चाहते थे कि मेरी पुत्री का विवाह अब शीघ्रातिशीघ्र हो जाये सो उन्होंने पुनः आत्मीयता से कहा—

"नहीं, हमने सारे तट पर खोज करवा ली। इस समय आप ही दिखाई दिये और भविष्यवाणी के अनुसार आप ही योग्य हो सकते हैं। अतः अब आप पधारें। देरी न करें, हमारी इच्छा पूरी करे।"

राजा के सरल स्वभाव और प्रेमपूर्ण वचनों को सुन राजकुमार ने मन में सोचा—शायद ये राजा सत्य कह रहे हैं। मुझे इनके साथ जाना चाहिये किन्तु यदि कोई षडयन्त्र भी होगा तो कोई चिन्ता का

विषय नही है क्योकि मैं अब अपने कर्मानुसार यहाँ आ
फँसा हूँ और अब यदि पुनः मैं किसी संकट में फसूँगा तो
मेरा एक मात्र रक्षक धर्म है। मुझे धर्म ही संकट और
षड्यन्त्र से बचायेगा। ऐसा विचार कर राजकुमार उदय-
भान राजा वज्रसेन के साथ जाने के लिए तत्पर हो गया।
अब क्या था? राजा मन्त्री सभी के चेहरे खुशी से चमक
उठे। उनकी खुशी का कोई पार नही था। सभी प्रसन्न थे।

सारे राज्य मे खबर फैल गई कि राजा द्वारा जिस
वर की प्रतीक्षा राजकुमारी विजया हेतु थी वे आ पहुँचे
तो प्रजा की खुशी का भी कोई ठिकाना न रहा। सारे
राज्य मे हर्ष की लहर दौड गयी। प्रजा द्वारा राजकुमार
उदयभान का बड़ा आदर सत्कार हुआ और राजा उसे
सम्मान राजमहल में ले गये। वर्षों बाद वह राजमहल
में प्रविष्ट हुआ।

निश्चित तिथि को राजकुमार उदयभान तथा राज-
कुमारी विजयाकुमारी का लग्नोत्सव हो गया। यह लग्नो-
त्सव बड़ी घूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर
राजा वज्रसेन ने अपने खजाने के द्वार दीन-दुखियो और
असहायो के लिए खोल दिये थे। राजा ने सारे राज्य में
यह घोषणा भी करवा दी कि मेरे पश्चात् यहाँ के राजा
मेरे जामाता ही होगे।

× × ×

विजयाकुमारी अपनी सखियो के साथ जल क्रीडा हेतु
कुछ दूर बह रही शान्त और निर्मल जल से युक्त नदी पर
गई। स्नान से पूर्व राजकुमारी ने वहमूल्य आभूषण उतार

नदी के तट पर रख दिये और काफी समय तक सखियं
के साथ जल क्रीड़ा कर वह वापस आई, वस्त्र औ
आभूषण पहने और पुनः वापस सभी लौट आयीं। जल्द
में राजकुमारी अपना एक कंगन वही भूल गयी जिसक
मूल्य सवा करोड़ रुपया था।

उदयभान तथा उसकी पत्नी विजयाकुमारी शय
कक्ष में आराम कर रहे थे। अचानक विजयाकुमारी क
दृष्टि अपनी कलाई पर जाती है जिसमें कंगन नहीं था
एक हाथ की कलाई में कगन न देख वह समझ जाती
कि स्नान करने से पूर्व आभूषण तट पर रखे और वाप
में जल्दी के कारण वह एक कंगन वही भूल आयी। उसक
सुन्दर चेहरा एकाएक कुम्हला जाता है, वह उदास ह
जाती है। उदयभान का ध्यान जब उसके चेहरे की ओ
जाता है तब वह पूछ बैठता है—

"प्रिये !"

"हाँ.......आँ"

"अचानक तुम उदास क्यो हो गयी ?"

"कुछ नही।"

"नही, कुछ तो है। अचानक चेहरा उदास क्यों
गया ?"

"जाने दीजिए।"

"अरे.......अरे क्या बात है ? तुम्हारी उदासी क
कारण मुझे बतलाओ।"

"जाने दीजिए, अब क्या लाभ ?"

"बात क्या है ? मुझे भी तो पता चले।"

विजयाकुमारी चुप ही रही। इस पर राजकुमार ने ुनः कहा—

"हमारी इस मिलन बेला में तुम्हारा यह सुन्दर चेहरा ुर्झा जाये, यह मैं नही चाहता। मुझे तुम वह कारण तलाओ, जिससे तुम्हें दु.ख हुआ।"

"बात तो कोई विशेष नही है। आज मैं अपनी खियो के साथ नदी पर स्नान हेतु गई थी। स्नान से ूर्व मैंने अपने सारे आभूषण उतार कर रख दिये थे। कुछ समय तक जल-क्रीड़ा के पश्चात् मैं आभूषण पहन सखियो के साथ पुनः लौट आई। जल्दी-जल्दी में मैं अपना एक कगन वही भूल आयी जिसका मूल्य सवा करोड रुपये है। वह.......वह कंगन मुझे पिताश्री ने दिया था। इसीलिए मन में चिन्ता हो आई।"

"तो यह बात है।" सुनकर उदयभान बोला।

"हाँ किन्तु छोडो, अव क्या लाभ ?"

"प्रिये ! तुम चिन्ता मत करो। मैं उस स्थान पर जाकर कंगन ले आता हूँ।"

"किन्तु अभी तो रात्रि का समय है।"

"तो क्या हुआ ?"

"आप किस प्रकार वहाँ तक जायेंगे ?"

"कोई बड़ी बात नहीं, मुझे उस नदी तक पहुँचने का मार्ग बतला दो।"

"नही, नही।"

"क्यों, इसमें क्या चिन्ता है ?"

"नही, आप वहाँ न पधारे। रात का समय है और मार्ग भी बड़ा विकट है।"

"तो कोई बात नही ! मैं तो पहुँच ही जाऊँगा।"

"नहीं, दिन में तो वहाँ आसानी से जाया जा सकता है किन्तु रात के अन्धकार में वहाँ तक जाना उचित नही।"

"प्रिये ! तुम उदास रहो और मैं तुम्हारी उदासी दूर न कर सकूँ, यह न होगा। मुझे जाना ही होगा।"

"ऐसी तो कोई बात नही। मैं उदास नही हूँ। एक कंगन गया तो क्या ? दूसरा कंगन बन जायेगा।"

"किन्तु मैं अभी वही कंगन ले आता हूँ।"

राजकुमार उदयभान रुका नही। उसकी पत्नी ने बहुत प्रयत्न किया कि उसे रोक लेवे किन्तु वह कंगन लेने हेतु चला ही गया। राजकुमार चलता-चलता उस स्थान पर पहुँचा जहाँ पर कंगन रह गया था। राजकुमार अब कंगन को खोजने लगा। अचानक दूर पड़ी वस्तु कुछ कंगन का आभास देती दिखाई दी। राजकुमार उसके समीप गया, उठाकर देखा। कंगन ही था। देखकर राजकुमार के मन में हर्ष छा गया। उसने कंगन उठा लिया और

वापसी के लिए चल दिया। चारों तरफ गहरा अन्धकार छाया हुआ था। मार्ग स्पष्ट नही दीख रहा था। चलते-चलते एकाएक राजकुमार का पैर विषैले सर्प पर पड़ गया। सर्प ने उसे डस लिया। फलस्वरूप राजकुमार के मुँह से एक जोर की चीख निकल गयी। जहर ने तत्काल असर किया। राजकुमार दो चार कदम चला होगा कि लडखड़ाया और भूमि पर गिर गया।

जिस स्थान पर वह मूर्च्छित हुआ था वहाँ से कुछ ही दूरी पर गणिका कामलता का घर था। राजकुमार की चीख सुन गणिका अपने साथ दो सेविका लेकर वहाँ आ पहुँची। उसने देखा एक सुन्दर युवक मूर्च्छित पड़ा है। समीप ही स्वर्ण कंगन पड़ा था। गणिका मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुई। उसने वह कंगन उठा लिया। तत्पश्चात् अपनी सेविकाओ की सहायता से यत्नपूर्वक राजकुमार को उठवाकर अपने घर ले आई। उचित उपचार कर उसका विष उतार दिया। कुछ समय पश्चात जब राजकुमार सचेत हुआ तो उसने आँखें खोली और इधर-उधर देखा।

"मैं.....मैं.....कहाँ हूँ।"

गणिका, जो कि उनके समीप ही बैठी थी, मुस्कराकर बोली—

"आप उचित स्थान पर ही है?"

"मैं यहाँ कैसे पहुँचा?"

"मेरे सरदार! आपको मैं उठवाकर लाई हूँ।"

"उठवाकर ! मगर"''मगर क्यों ?"

"आपको विषैले सर्प ने डंस लिया था और आप मूर्च्छित हो मार्ग में पड़े हुए थे।"

यह सुनते ही राजकुमार को सारी घटना याद हो आई। वह उठकर तत्काल अपनी पत्नी के पास महल पहुँच जाना चाहता था। उसने अपने आसपास देखा और उसे कंगन याद आ गया। वह गणिका से बोला—

"मेरे पास एक स्वर्ण कंगन भी तो था ?"

"जी, होगा।" गणिका ने उपेक्षा से कहा।

"क्या''''क्या ? तुम्हें वही पर मेरे समीप कंगन पडा हुआ नही मिला ? शायद वह वही गिर गया होगा।"

"आप इतने चिन्तित क्यो है, श्रीमान ! वह कगन तो आपकी दासी के पास है।"

"तो मुझे वह कंगन दे दो। मैं जाना चाहता हूँ।"

"अब तो आप मेरे स्वामी है और मैं आपकी दासी। भला अब आप कहाँ जायेंगे ?"

इन शब्दों को सुनकर राजकुमार समझ गया था कि वह पुनः विपत्ति में फँस गया और यह स्त्री उसे जाने नही देगी। फिर भी राजकुमार ने उठकर जाने की कोशिश की किन्तु कामलता ने उसे जाने से रोकते हुए कहा—"अरे, इतनी जल्दी क्या है जाने की ?"

गणिका, राजकुमार के रूप और यौवन पर पूर्णरूप से मुग्ध हो गई थी। अतः पुनः बोली—

"आपकी सेवा में हम है। आपको अभी कुछ दिन तो यही रुकना होगा और मेरा आतिथ्य स्वीकार करना होगा। मैं तुम्हारे ऊपर न्यौछावर हो गई हूँ।"

वह कामासक्त हो राजकुमार के गले में अपनी कोमल कलाइयो को डालते, इठलाते और नैनों में मादकता भरते हुए बोली—

"हाय""तुम्हारी यह जवानी और मेरी यह सुन्दरता! क्या ही आनन्द आयेगा जब तुम मेरे सर्वस्व बन जाओगे। मेरे स्वामी! तुम अब मेरे ही पास सदा-सदा के लिए रहो। मैं तुम्हें चाहती हूँ।"

राजकुमार ने उसके हाथो को हटाते हुए कहा—

"क्षमा करिए, मुझे जाना है।"

गणिका इठलाती हुई बोली—

"अरे, जाना तो हमे भी है किन्तु पहले जवानी को तो व्यतीत कर लें फिर सोचेंगे।"

"नही, मुझे अभी जाने दें। मैं यहाँ पर क्षण-भर के लिए भी नही रुक सकता।"

"नही, अब आप कही भी नही जायेंगे। आप **मेरे मन,** प्राण, शरीर सर्वस्व के स्वामी बने। मैं आपको **यह** शरीर, यह जवानी, अपना सब कुछ सौपती है।

कामलता के निर्लज्जतापूर्ण शब्द चकित रह गया। वह उसकी ओर देखता कुछ बोल न सका।

कामलता ही हाथ जोड़कर पुनः बोली—

"मेरी बात मानिए। मैं आपके चरणो में अपना जीवन गुजार दूँगी। आपकी सेवा तन-मन-धन से करूँगी।"

उदयभान एक चरित्रवान राजकुमार था। चरित्रवान पुरुष ऐसी बातों से विचलित नहीं हुआ करते। संकट के समय भी वे अपना संयम नही खोया करते। उदयभान पर गणिका की बातों का कोई प्रभाव नहीं पडा और राजकुमार उदयभान वहाँ से चलने को उद्यत हुआ। यह देख गणिका अत्यन्त क्रोधित हो उठी। यह अपमान उसके लिए असहनीय था। अपना वश न चलते देख उसने अपने सेवक-सेविकाओं की सहायता से राजकुमार उदयभान को तलघर में डलवा दिया। बेचारा उदयभान भाग्य का मारा, जहाँ भी जाये ठोकरे ही खाये। उसका जीवन संघर्षमय था किन्तु वह भी हिम्मत के साथ हर परिस्थिति का मुकाबला करता चला जा रहा था। □

१६

इधर विजयाकुमारी अपने पति का इन्तजार बड़ी बेचैनी से कर रही थी। रात आधी से भी ज्यादा व्यतीत हो चुकी थी। उसकी आँखो में नीद नही थी। व्याकुलता में वह इधर-उधर घूम रही थी। वह सोच रही थी कि

'अब क्या होगा? कितना समय गुजर गया, वे अब तक क्यो नही लौटे? उन्हे भी नही जाना था। कितना रोका किन्तु मेरी एक नही मानी। मैं भी बड़ी भूल कर बैठी। यदि कंगन वहाँ न भूलती तो यह बात नही होती। अब क्या करूँ, क्या न करूँ कुछ भी समझ में नही आता।'

इन्ही विचारो में और अनिष्ट की कल्पना मे वह और अधिक दुःखी हो रही थी। कितना समय गुजर गया। रात बीत गई। प्रातः हो चुकी थी। विजयाकुमारी सारी रात विलाप करती रही और प्रातः अपनी सखियो को बुलवाया। आँखो से अविरल अश्रु बह रहे थे मुखमण्डल कुम्हला गया था। मन में गहरा दुःख था। सखियों ने जब देखा तो उससे पूछा—

"अरे, राजकुमारीजी! यह क्या हालत बना रखी है?"

"........"

"कुछ तो बोलो, क्या हुआ?"

सखियो ने पुनः पूछा, किन्तु राजकुमारी रोने के अतिरिक्त कुछ नही बोली। यह हालत देख उपस्थित सखियो ने राजा और रानी तक खबर पहुँचा दी। अपनी पुत्री को दुःखी जान दोनो वहाँ दौड़े-दौडे आ पहुँचे। सभी विजयाकुमारी के कक्ष मे उपस्थित हो गये। रानी ने अपनी पुत्री के सिर पर स्नेह से हाथ रखते हुए पूछा—

"बेटी! क्या बात है? तुम क्यो रो रही हो?"

"माँ!" विजयाकुमारी के मुख से निकला और वह अपनी माँ से लिपट गई।

यह देख राजा ने कहा—

"बेटी ! क्या बात है ? हमें भी बताओ। तुम्हारे साथ कौन-सी घटना घटी ?"

सभी चिन्तातुर थे। उदास थे।

तब रानी बोली—

"हाँ बेटी ! कुछ तो कहो। रोने से हमें कैसे पता चलेगा कि तुम्हारे ऊपर क्या संकट आ पड़ा ?"

तब राजा ने इधर-उधर देखते हुए विजयाकुमारी से पूछा—

"बेटी ! जामाता नही नजर आ रहे है। वे कहाँ गये ?"

राजकुमारी के कुछ नही बोलने पर राजा अब अधिक चिन्तित हो गये थे। उन्होने अपनी बेटी से पुनः कहा—

"कहाँ है राज-जमाई ! कौन दुष्ट है जिसके कारण तुम्हें कष्ट पहुँचा ? बताओ, मुझे साफ-साफ बताओ, बेटी !"

"हाँ बेटी ! हमसे कहो। हमें चिन्ता हो रही है।"

तब रोते हुए कुंवरी ने कहा—

"पिताजी ! मैं कल नदी तट पर गई थी। स्नान के समय गहने उतारे और वापसी में अपना एक कंगन कही भूल आई। रात्रि में जब कंगन का पता उन्हे चला तो वे कंगन लेने चले गये। मैंने बहुत मना किया किन्तु वे नही माने कह गये कि कंगन लेकर अभी लौट आता हूँ। पता नहीं उनके साथ क्या घटना घटी ? वे क्यो नही आये ? मैं सारी

रात राह देखती रही, किन्तु वे अभी तक नहीं आये।" और राजकुमारी पुनः रोने लगी।

सभी के चेहरे पर चिन्ता की रेखा खिंच गई। राजा-रानी चिन्तातुर हो उठे। महाराज ने तत्काल अपने अनुचरो को बुलवाया और आदेश दिया कि "जाओ और चारो तरफ खोज करो कि राज-जामाता अभी तक क्यों नही लौट पाये ? वे कहाँ हैं ?"

फिर क्या था ? अनेकों सिपाही घोड़े लेकर दौड़ पड़े। देखते-देखते बात चारों ओर फैल गई। सभी नर-नारी सुन-सुनकर आश्चर्यचकित थे। सिपाहियों ने वन-उपवन, नदी-नाले यहाँ तक कि नगर और वन का कोना-कोना छान मारा किन्तु राज-जमाई का कही कोई पता न चला। कुछ ही दिनों में पूरे राज्य का प्रत्येक हिस्सा देख डाला पर व्यर्थ। कही कोई पता नही। नामोनिशान नही। सिपाही और सामन्त लोग जो कि खोज के लिए गये थे, अपना-सा मुँह लिए वापस राजा के पास आये और अपनी असफलता उन्हे बताई। सबके सब हताश हो गये।

राजा को जब पता चला कि राज-जमाई कही भी नही मिले तो वे बहुत दुःखी हुए। रानी भी दुःखी हुई और राजकुमारी के दुःख का तो ठिकाना ही नही रहा। प्रजा में भी शोक की लहर छा गई। अब महाराज दिन-भर उदास और चिन्तित रहते। राजकाज में उनका मन नहीं लगता, दिन-रात अपने जामाता की ही चिन्ता किया करते। उनसे अपनी बेटी का दुःख सहन नही

था। राजा को दुःखी देख मन्त्री तथा सामन्तगण उन्हें धीरज बँधाते, सांत्वना देते—

"महाराज! चिन्ता न करें। दुःखी होने से कोई लाभ नही। जो होना था, हो गया। होनी को कौन रोक सकता है। राजजमाई कहीं न कही तो होगे ही। हमारा तो विचार है ये किसी कार्यवश कही चले गये हैं। शीघ्र ही वापिस आ जायेगे। आप दुःखी न होवे। आपको दुःखी देख भला प्रजा किस प्रकार सुखी रह सकती है? आप हिम्मत न हारे।"

किन्तु राजा-रानी अपनी बेटी के भविष्य का विचार कर और अधिक दुःखी हो जाते। बेटी का क्या अपराध जो उसे पति-वियोग की सजा भुगतनी पड़ रही है।

इसी तरह तीन मास व्यतीत हो गये। राजकुमार का न कोई समाचार, न पता। राजा ने उसकी खोज के लिए अनेक प्रकार का यत्न किया किन्तु सब व्यर्थ।

एक दिन विजयाकुमारी अपनी सखियो के मध्य बैठी थी। उसका मुख मण्डल कुम्हलाये पुष्प की भाँत दिखाई दे रहा था। पति बिना जीवन सूना-सूना लग रहा था। वह रात-दिन उदास रहती थी। पास बैठी एक सखी बोली—

"कुंवरी जी! यह क्या? आप दिनोदिन कमजोर होती जा रही है।"

राजकुमारी ने सखी की ओर देखते हुए फीकी मुस्कान से कहा—

"मेरी तकदीर ही कमजोर होती जा रही है तो मैं क्या करूँ ?"

"इस तरह इतनी चिन्ता करोगी तो अवश्य ही अस्वस्थ हो जाओगी। जरा अपने मन को धीरज बँधाओ।"

राजकुमारी रो पड़ी और बोली—

"कैसे धीरज रखूँ सखी ! उनका कोई पता या समाचार होता तो कोई बात न थी - किन्तु अचानक यों........ अब क्या रहा है मेरे पास ? मेरा जीवन अब व्यर्थ है।"

"नही कुँवरी जी ! ऐसा नही, आप धीरज रखो, हमे आशा है कि वे एक दिन जरूर आयेंगे।"

राजकुमारी रोते हुए सखी से बोली—

"कहाँ से आयेंगे ? कोई पता ठिकाना तो होगा। पिताश्री ने उन्हें खोजने हेतु क्या कम प्रयत्न किये ? सब बेकार। ऐसे कहाँ चले गये ? मेरी तो कुछ भी समझ में नही आता।"

सभी सखियाँ चुप हो गई। कुछ देर चुप्पी के पश्चात् राजकुमारी ने कहा—

"सखी ! अब तो मैंने एक निश्चय कर लिया है।"

"निश्चय ! कैसा निश्चय ?"

"यह शरीर, जो पति बिना अपूर्ण है, चिता के हवाले कर दिया जाये।"

सुन सभी सखियो का मुँह आश्चर्य से खुला का खुला रह गया। उनकी समझ मे नही आ रहा था कि राजकुमारी ने यह क्या सोच लिया और कैसे सोच लिया ?

चिन्तित और दुःखी हो उठी। सखियां उसे समझाते हुए बोली—

"कुंवरी जी! यह आपने कैसा निश्चय कर लिया है?"

"हां सखी! पति-वियोग अब मुझसे सहा नहीं जाता।"

"किन्तु इस वियोग का यह तो कोई उपचार नहीं।"

"अब जीना व्यर्थ ही है। जिस तरह आत्मा बिना शरीर, खुशबू बिना फूल और चांद बिना रात्रि शोभा नही देती; ठीक उसी प्रकार पति बिना नारी भी शोभा नही देती। पतिविहीना नारी अशोभनीय है। जीवन में जब पति ही नहीं तो क्या शेष रह जाता है? इसलिए मैंने अब अग्नि-प्रवेश का निश्चय कर लिया है। जिससे सारे कष्ट और यह सूना जीवन नष्ट हो जावे।"

"नहीं, नही, धीरज धारण करो। इस प्रकार निश्चय करना उचित नही। कुंवरी जी! जरा सोचिये। क्या आप अपना जीवन यूंही नहीं गुजार सकती। प्रथम तो हमें आशा है कि राज-जमाई अवश्य ही आवेंगे और यदि ऐसा नही होता है तो·······।"

"तो क्या सखी?"

"तो आप अपना सारा जीवन सत्कार्य में लगा देवें। आपके समान दुःखी और भी तो कई नारियाँ रही हैं और आज भी है। जिन नारियों का जीवन नीरस हो गया है उन्होने अपने जीवन से पुनः लगाव उत्पन्न कर लिया

अर्थात् वे दूसरों के लिए जीने लगी। अपना जीवन अच्छे कार्यों में लगा दिया और सत्कर्म से अपना जीवन धन्य कर लिया, समाज के हित में कार्य किया। हमारी तो यही सलाह है कि आप अपना बाकी जीवन धर्म के मार्ग को अपना कर शुभ कर्मों में लगा देवें। जिससे आपको संतोष प्राप्त होगा साथ ही जीने का सहारा भी मिल जायेगा।"

सखियों ने अनेक प्रयत्न किया कि वह अपना निश्चय बदल दे किन्तु कुमारी नहीं मानी। वह अपनी प्रतिज्ञा-पर अटल रही। सारी प्रजा और राजा-रानी भी यह प्रतिज्ञा सुन विचलित एवं अत्यन्त दुःखी हो गये। सारे राज्य में दुःख छा गया। राजा तथा रानी ने भी कई प्रकार से अपनी बेटी को समझाया किन्तु वह नही मानी। राजा ने देखा कि सारे प्रयत्न व्यर्थ गये और राजजमाई नही मिले, अब यह बेटी भी अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ है तो उन्होने अन्तिम बार समझाते हुए कहा—

"बेटी! मैं तुम्हारे दुःख को समझ रहा हूँ। तुम्हारे साथ क्या तुम्हारी माता, ये सारी प्रजा और मैं भी दुःखी नही हूँ? हम भी बड़े व्याकुल है किन्तु क्या उपाय? तुम कुछ समय तो और ठहरो। कदाचित उनका कोई पता चले।"

राजकुमारी तब बोली—

"ठीक है पिताश्री! आपकी आज्ञानुसार में **कुछ दिन** और रुक जाती हूँ। आप सारे राज्य में यह

दें कि चालीस दिन तक मैं राह देखूँगी। पश्चात मेरा यह शरीर अग्नि को भेट हो जावेगा।"

महाराज ने सारे राज्य में उदघोषणा करवा दी। उदघोषणा क्या थी एक वज्रपात ही था। प्रजा दुःखी हो उठी। होनी को न जाने क्या होना था? कोई क्या कर सकता था? प्रजा के लिए तथा राजकुमारी के माता-पिता के लिए यह प्रतिज्ञा असहनीय थी।

विजयाकुमारी के द्वारा यह दृढ़ प्रतिज्ञा कि—'चालीस दिन तक पति के न आने या उनका कोई समाचार नही आने पर वह अग्नि-प्रवेश कर लेगी' सारे राज्य में फैल गई और यह खबर राजकुमार उदयभान के कानो तक भी पहुँची। वह चिन्तित हो उठा। विचार करने लगा कि मैं तो यहाँ कैद हूँ और मेरे दुःख में पत्नी तिल-तिल जल रही है। अगर मैं समय पर नही पहुँचा तो वहुत वड़ा अनर्थ हो जायेगा। यहाँ से किस प्रकार वचकर निकला जा सकता है यही वह विचार करने लगा। सारे राज्य में राजकुमारी के दुःख निवारण हेतु प्रजा परमात्मा से प्रार्थना करने लगी। इन दिनों चारों ओर धार्मिक क्रियाएँ वढ गईं। प्रजा नाना भाँति के धार्मिक-कार्यों में जुट गई थी। सभी चाहते थे कि किसी प्रकार राजकुमारी का जीवन वच जावे और आया हुआ संकट टल जावे।

इसी तरह उनचालीस दिन व्यतीत हो गये और वह दिन भी आ गया जब विजयाकुमारी को अग्नि-प्रवेश करना था। राज-जमाई का अब तक कोई पता नही चला। चारों

तरफ हा-हा कार मच गया था। संध्या का समय। चिता सजाई गई। राजा-रानी तथा विजयाकुमारी एवं हजारों नर-नारी चिता के स्थान पर पहुँचे। राजकुमारी ने सादी पोशाक पहन रखी थी। उसके चेहरे पर अब कोई भाव नही थे केवल एक दृढ़ प्रतिज्ञा ही झलक रही थी।

एक घण्टा शेष रह गया था। सारी प्रजा अन्तिम विदाई देने के लिए वहाँ पर एकत्रित हो गई थी। कुछ ही समय पश्चात सर्वत्र अन्धकार होने वाला था।

अचानक एक नगरवासी वहाँ दौडता हुआ आया, जहाँ पर राजा-रानी एवं सैंकडो नर-नारी उपस्थित थे। वह हाँफ रहा था किन्तु उसके चेहरे पर प्रसन्नता छलक रही थी। हाथ मे एक पत्र लिये वह राजा के निकट शीघ्रता से आते हुए चिल्लाया—

"महाराज ठहरिये........ठहरिये महाराज !"

राजा-रानी एवं राजकुमारी के साथ ही अनेक नर-नारियो की दृष्टि उसी ओर उठ गई जिधर से आवाज आई थी। सभी ने देखा उस व्यक्ति के हाथ मे कोई पत्र है। वह राजा के निकट आकर पुनः बोला—

"बधाई हो महाराज !"

"कैसी बधाई ! क्या बात है ?" राजा
उसकी ओर देखते हुए पूछा।

अपनी सांसो पर काबू पाने के

"महाराज ! राज-जमाई का

"क्या ? कहाँ है वे ?"

"हाँ महाराज ! राज-जमाई का पता चल गया है। वे हमारे ही राज्य में ही है।"

अब क्या था ? राजा-रानी तथा उपस्थित जन समूह में खुशी की लहर व्याप्त हो गई। राजकुमारी की खुशी का तो कोई ठिकाना ही न रहा। जितना कष्ट उसे अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक था उतनी ही प्रसन्नता भी उसे अधिक हुई। वह तो आनन्द के सागर में डूब ही गई उसे अपने कानों पर विश्वास ही नहीं हो रहा था कि यह सत्य है। उसे अपने पतिदेव के दर्शन हेतु इतनी अधीरता होने लगी कि उनका पता जान वह तुरन्त वहाँ पहुँच जाती किन्तु माता-पिता की उपस्थिति में वह चुप ही रही मात्र उसके होठ कँपकँपा रहे थे।

राजा ने उत्सुक होकर उस व्यक्ति से पूछा—

"तुम्हें कैसे पता चला ? कहाँ हैं जामाता ? शीघ्र ही बताओ।"

"यह पत्र……यह पत्र महाराज ! आपके जामाता के ही द्वारा लिखा गया है जो उन्होंने भेजा है।"

राजा ने पत्र अपने हाथों में ले लिया और उसे पढ़ने लगे। पत्र में उदयभान ने सारी घटना का वर्णन किया और यह भी लिखा कि 'मैं पराधीन हूँ। गणिका कामलता ने मुझे कैद कर रखा है। अन्यथा मैं वहाँ कभी का आ पहुँचता।' राजा ने पत्र समाप्त कर कहा—

"अहो, कितनी खुशी की बात है कि जामाता का पता चल गया !"

सारे वातावरण में खुशियों की लहर दौड़ गई। विजया-कुमारी की आँखो से खुशी की अधिकतावश आँसू निकल आये। फिर क्या था ? राजा, मन्त्रीगण और सैनिक अवि-लम्ब गणिका कामलता के आवास पर पहुँच गये। काम-लता को पता चला तो वह अपने निवास से घबराती हुई बाहर निकली। वह समझ गई कि राजा को पता चल गया होगा किन्तु वह सम्हल कर मुस्कराती हुई उनका आदर सत्कार करते हुए बोली—

"धन्य भाग्य, कि मेरे घर आज प्रजापालक महाराज पधारे हैं ! मैं तो धन्य हो गई। कहिए महाराज ! मुझ तुच्छ के लायक क्या सेवा है ?"

राजा के सिपाहियो ने कामलता को पकड़ लिया। तब महाराज ने क्रोधित हो उससे पूछा—

"नीच ! पापिनी ! बता राज-जमाई को कहाँ कैद कर रखा है ?"

कामलता ने अपनी करतूत को छुपाते हुए आश्चर्य से पूछा—

"राज-जमाई........! कौन राज-जमाई ? महाराज ! यह आप क्या कह रहे है ?"

"ओह ! अब समझा, स्वार्थवश तू इतनी गिर
उचित-अनुचित भी नही सोचा। राज-जमाई
कैदखाने मे कैद कर हमारे समक्ष ही झूठ बोल

"नही, नहीं; महाराज ! यह झूठ है।"

"झूठ नही, यह सच है कि तूने उन्हे छुपा रखा है। जल्दी बता, कहां है ?"

"महाराज ! क्षमा कीजिए। मैं सच कह रही हूँ, मैने तो उन्हें देखा ही नहीं। वे तो यहाँ आये ही नहीं। भला मैं उन्हें क्यो छिपाती ?"

तब राजा ने अनुचरो की ओर देखा। तत्काल ही अनुचरों ने गणिका को पीटना शुरू कर दिया। कहा जाता है कि मार के सामने शैतान भी नही टिकता सो वह गणिका भी मार की पीड़ा को सहन न कर पाई और हाथ जोड़ महाराज से रोती हुई बोली—

"दया करो, दया करो, महाराज ! मैं अभी बताती हूँ।"

राजा के आदेश से अनुचरों ने उसे छोड़ दिया।

गणिका तलघर में पहुँची और उदयभान को अपनी जेल से मुक्त कर दिया। जमाई और ससुर गले मिले। प्रसन्नतावश दोनों की आँखों में अश्रु कण झलक रहे थे। राजा ने तब अपने अनुचरो को आज्ञा दी कि "इस गणिका को पकड़ लिया जाये। इसका फैसला दरबार में होगा। यह अपराधिनी मृत्यु दण्ड की हकदार है।" तब उदयभान ने कहा—

"नहीं, नही, महाराज ! आप……आप इसे छोड़ दें। इसे सजा न दें। यह तो अपने कर्म के अनुसार ऐसे नीच

कार्य को करने हेतु तत्पर हुई है। कर्म के ही प्रभाव से ऐसे तुच्छ विचार इसके मस्तिष्क मे आये। अच्छा ही होगा कि आप इसे माफ कर दें।"

"यह क्या कहते हो कुंवर जी !"

"हाँ महाराज ! इसका कार्य ही ऐसा है जिससे निम्न विचार पनपते हैं। अच्छा यही होगा कि आप ऐसे नीच कार्य को अपने राज्य से समाप्त कर दे। इस कार्य पर अर्थात् वेश्यावृत्ति पर रोक लगवा देवें और इन्हे पर्याप्त धन देकर इनके जीवन का उद्धार करने हेतु इन्हे सभी प्रकार की सहायता दें।"

गणिका कामलता तत्काल राजा के पैरो में गिर गई और रोते हुए क्षमा माँगने लगी—

"महाराज ! मुझे क्षमा करें अज्ञानतावश मैं ऐसा कर बैठी।"

तब राजा ने कहा—

"ठीक है उठो; मैंने तुम्हें माफ किया।"

कुमार उदयभान की बात सुन राजा का मन पिघल गया। वे खुश हुए। तब गणिका कुमार के पैरों पर गिर गई और उससे भी क्षमा याचना करने लगी। वहाँ उपस्थित जन समूह राजजमाई के उच्च विचारों को सुन उनकी प्रशंसा करने लगा। राजा ने बाद में अपने उद्घोषणा करवा दी और वेश्यावृत्ति को अ
करवा दिया।

राजा वज्रसेन अब वृद्ध हो चुके थे अतः वे चाहते थे कि राजकाज से निवृत्त हो जावे तथा जामाता को राजगद्दी पर बिठा दिया जावे। अतः उन्होंने निमित्तज्ञो तथा सभासदों से विचार विमर्श कर शुभ मुहूर्त निकलवाया और उचित समय देख उदयभान का राजतिलक कर दिया गया। राजतिलक का समारोह बड़े ही उत्साह एवं धूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ।

राजकुमार उदयभान अब अंकद्वीप का राजा बन गया था। अंकद्वीप की प्रजा ने नये राजा का भारी सम्मान किया। राज्य में खुशियाँ मनाई गई। प्रजा न्यायप्रिय और परोपकारी राजा को पाकर अपने को सौभाग्यशाली समझने लगी। अब उदयभान के राज्य मे प्रजा सुख से रहने लगी। वैसे तो राजा वज्रसेन के राज्यकाल में भी प्रजा आनन्दपूर्वक और निर्भीक जीवन व्यतीत कर रही थी किन्तु अब राजा उदयभान ने प्रजा के हित में अनेक शुभ कार्य प्रारम्भ कर दिये। दुःखी और असहाय प्रजा के लिए विशेष कार्य किये जाने लगे।.उदयभान के राज्य में न चोरी होती, न लूट। सारी प्रजा सुख से रहने लगी। इस तरह उदयभान को राज्य करते कुछ समय व्यतीत हो गया।

एक दिन राजा उदयभान को अचानक अपने बड़े भाई वीरभान की याद आ गई। वह उससे मिलने के लिए अधीर हो गया। उसने निश्चय किया कि अब जाकर अपने बड़े भाई राजा वीरभान से भेंट करनी चाहिये। अब

वह समय आ गया है जब मैं अपने भाई वीरभान से उसी की बरावरी में आकर मिल सकता हूँ। अपने समकक्ष जान वह मुझसे मिलेगा तो बहुत ही प्रसन्न होगा। यह विचार कर राजा उदयभान ने अपने भाई वीरभान के पास जाने की तैयारी कर ली। तीन दिन के बाद उदयभान राजसी ठाट-बाट मे अपने बडे भाई से मिलने के लिए चल दिया।

□

१७

संध्या का समय। राजा वीरभान के निकट एक अनुवर ने आकर अभिवादन कर कहा—

"महाराज ! अंकद्वीप से राजा उदयभान आपसे मिलने आए है।"

"राजा उदयभान !" राजा वीरभान ने आश्चर्य व्यक्त करते हुए पूछा।

"जी महाराज ! वे अपने को आपके भाई वता रहे हैं।"

यह सुन राजा वीरभान को आश्चर्य एवं प्रसन्नता दोनों हुईं। वह खुश हो सोचने लगा 'उदयभान और राजा !

वह भी अंकद्वीप का ! अहो, यह तो बड़ी प्रसन्नता की बात है ! किन्तु वह अंकद्वीप कैसे पहुँच गया और राजा कैसे बन गया ?·······ओह···· ···मैं तो उसे मृत जान अपने मन में संतोष कर चुका था । यह तो बड़ी ही अनहोनी घटना है । कैसा विचित्र संयोग है । वह अभी जीवित है, यह प्रसन्नता का विषय है । मैं तो उसे अचेत अवस्था में वन में छोड़ आया था और पुनः जाने पर वह वहाँ नही मिला । मैं यह सोच कि·······नही-नहीं वह जीवित है । वह राजा बन गया है और मुझसे मिलने आया है ।' राजा की खुशी का ठिकाना न रहा, चेहरे पर प्रसन्नता छा गई, वह बोला—

"कहाँ है उदयभान ?"

"महाराज ! वे नगर से बाहर नदी के निकट उद्यान में ठहरे है ।"

"तो जाओ, शीघ्र जाओ और सादर उन्हें यहाँ पर ले आओ तथा·······।"

कुछ देर सोचकर राजा वीरभान ने पुनः कहा—

"नही, ठहरो, तुम ऐसा करो कि मन्त्री को तुरन्त मेरे पास भेज दो ।"

"जैसी आज्ञा महाराज की ।"

राजा का पुनः अभिवादन कर अनुचर वहाँ से चला गया ।

राजा वीरभान की खुशी का ठिकाना न था । इतने

लम्बे अन्तराल के बाद उसका भाई उदयभान आया और वह भी राजा बनकर। वह पुनः आश्चर्य कर सोचने लगे कि 'वह वन में से कहाँ चला गया था ? अचेत था और मैं तो यह सोच बैठा कि वन में हिंसक पशु उसे खा गये होगे। अन्यथा वहाँ पर कौन था जो सहायता करता किन्तु वह जीवित है यह विचित्र बात है। मैं आज कितना भाग्यशाली हूँ। मुझे तो विश्वास ही नही हो रहा कि उदयभान मुझसे मिलने आ रहा है।'

"महाराज की जय हो !" मंत्री ने प्रवेश करके राजा का विचार प्रवाह भग कर दिया।

"आओ मन्त्रीवर ! बैठो।"

मन्त्री जब बैठ गया तो राजा वीरभान बोला—

"तुम्हे याद है कि एक बार मैं अपने भाई को खोजने वन में गया था ?"

"हाँ महाराज ! किन्तु इस घटना को तो बहुत समय गुजर गया।"

"हाँ समय तो काफी गुजर गया किन्तु जिस भाई को खोजने मैं वन मे गया था वही भाई·······वही भाई उदय-भान आज मुझसे मिलने आया है।"

मन्त्री ने प्रसन्न होकर कहा—

"महाराज ! यह तो बड़ी खुशी की बात है।"

"हाँ, और इसीलिए मैं चाहता हूँ कि इस खुशी के **अव**-सर पर सारे नगर को सजाया जावे। खुशियाँ मनाई

और प्रातःकाल पूर्ण राजसम्मान से राजा उदयभान को नगर प्रवेश करवाया जाये।"

"राजा उदयभान····? क्या·······क्या आपके भाई अब राजा है ?"

राजा वीरभान ने गर्व से कहा—

"हाँ, मेरा भाई उदयभान अंकद्वीप का राजा है और आज वह मुझसे इतने अन्तराल के बाद मिलने आ रहा है। इस खुशी में मैं तो मानो सब कुछ पा गया हूँ।"

"धन्य है महाराज !"

"मन्त्रीवर ! तुम सारी तैयारी करो।"

"जी महाराज !"

"और सुनो ! तुम पता लगाओ कि उनके ठहरने का क्या प्रबन्ध है ? उन्हें किसी बात की परेशानी न हो। आवश्यकता की प्रत्येक वस्तु उपलब्ध करवाई जाये।"

"बहुत अच्छा महाराज !"

"जाओ मन्त्रीवर ! और अब तुम सारे उपयुक्त प्रबन्ध में लग जाओ।"

"ठीक महाराज !"

राजा का अभिवादन कर मन्त्री वहाँ से चल दिया।

प्रातःकाल। विशाला नगर को दुल्हन की भाँ सजाया गया। जहाँ निगाह जाती, खुशियाँ लोगो के चेह पर स्पष्ट झलक रही थी । प्रजा मे चहल कदम

उत्साह और उमंग भरी थी। प्रातःकाल पूर्ण तैयारी कर राजा वीरभान, राजा उदयभान के समीप उद्यान में पहुँचे। दूर से ही भाई वीरभान को आते देख उदयभान उठ खड़ा हुआ और अपने भाई से मिलने लगभग दौड़ पड़ा। राजा वीरभान भी तेजी से उदयभान की ओर चल दिये। उत्साह और उमंग में आकर दोनों भाई गले मिले। यह मिलन बारह वर्ष पश्चात हो रहा था। इतने अन्तराल के पश्चात दोनो भाई आपस मे गले मिले। दोनो भाइयों की आँखें गीली हो चुकी थी। यह मिलन देख हजारो नर-नारी की आँखो से भी अश्रु कण निकल आये। चारो ओर राजा वीरभान एवं राजा उदयभान की जय-जयकार हो रही थी। दसो दिशाएँ मानो मुस्करा रही थी। दोनो भाइयों के प्रेमपूर्ण मिलन और इस जोड़ी को देख सैकड़ो नर-नारी प्रसन्न हो रहे थे। राजा वीरभान एवं राजा उदयभान मिलन के पश्चात नगर की ओर चल दिये। प्रजा ने राजा उदयभान का भारी स्वागत किया। राजा उदयभान को लेकर राजा वीरभान महल में पहुँचे।

राजमहल में राजा उदयभान की हर सुख-सुविधा की संभव व्यवस्था की गई क्योकि राजा उदयभान राजा ही नही, वीरभान का भाई भी था। अतः लघु भ्राता को बड़े ही प्रेमपूर्वक अपने राजमहल में ठहराया।

रात्रि के समय वीरभान उदयभान दोनों महल के ऊपरी कक्ष मे बैठे अपने बीते जीवन का लेखा-जोखा सुना रहे थे। सुख-दुःख की बाते सुना रहे थे। दोनो के नेत्रो से अविरल अश्रु धारा बह रही थी। उदयभान ने कहा—

"भैया ! यह तो होनी थी जो होकर ही रही। हम बिछड़े और बिछड़कर फिर मिले, यही हमारा सौभाग्य है।"

"हाँ उदय ! मैं तो तुम्हारी आशा ही छोड़ बैठा था। कितना खोजा तुम्हें वन में किन्तु तुम नहीं मिले। किन्तु तुम जब विशाला पहुँच चुके और मुझे देख लिया और तुम्हें पता चल गया कि तुम्हारा भाई मैं ही यहाँ का राजा हूँ तो तुम्हें मेरे पास आना चाहिये था। तुम क्यों नहीं आए ? यह मुझे उचित नही लगा।"

"भैया ! मैंने तुम्हें बताया न कि मैंने भी निश्चय कर लिया था कि स्वयं को आपसे मिलने योग्य बनाऊँ, उसके पश्चात हो मिलूँ।"

"अरे नादान ! क्या तुम मेरे भाई नही हो ? क्या तुम्हारे और मेरे शरीर में एक ही रक्त नही दौड़ रहा है ? यह क्या कम था कि तुम मेरे दाहिने हाथ हो ? फिर योग्य बनने का प्रश्न ही नही था। तुम्हे मेरे पास अविलम्ब पहुँचना था।"

"हाँ भैया ! किन्तु एक बात और थी और वह यह कि वास्तव में मैं यह देखना चाहता था कि मुझे और कब तक सुख-दुःख झेलना है, कब तक धूप-छाँव के चक्कर में पड़ना है और क्या-क्या नये अनुभव प्राप्त करने हैं ? मैं चाहता था कि जब मेरे हिस्से में आया कष्ट समाप्त हो जावेगा और मेरे शुभ कर्मों का उदय होगा तभी आपसे

मिलूँगा और आज वह घड़ी आ पहुँची। मैं और आप पुनः मिल गये।"

इसी तरह बात करते-करते रात आधी से ऊपर गुजर गई। तभी उदयभान ने कहा—

"भैया! यह तो सब किस्मत का खेल था। जो होना था सो हुआ। किन्तु भैया! हमारे पिताश्री के क्या हाल हैं?"

"इतना समय गुजर गया किन्तु अब तक मैं भी वहाँ नही जा पाया और न ही कोई समाचार ही है।"

"ओह!........अब क्या करना चाहिये?"

"हाँ उदय! मुझे भी पिताश्री की चिन्ता होती रहती है। न जाने सुखी है अथवा दुःखी।"

"भैया! क्यो न हम अपने पिताश्री के वहाँ पहुँचें और उनके समाचार जानें?"

"हाँ, यह तो उत्तम विचार है। हमें वहाँ चलना चाहिए। अब तो वे वृद्ध हो चले होंगे। ऐसे समय में हमें उनके पास रहना चाहिये और उनकी सेवा शुश्रूषा करनी चाहिये।"

"हाँ भैया! माता-पिता की सेवा तो भाग्यशाली को ही मिलती है। उनका हम पर भारी उपकार है। उन्ही ने तो हमें चलना-फिरना और बोलना सिखलाया। वे हमें

के फैलाये जाल में पिताजी फँस गये अन्यथा हमें अपनी निगाहों से एक क्षण भी ओझल न करते।"

"तो फिर हम शीघ्र ही यहाँ से प्रस्थान कर देंगे।"

"हाँ, हमें शीघ्र ही पिताश्री के पास पहुँच जाना चाहिए।"

दोनों भाइयो ने अपने देश—अपनी जन्मभूमि जाने की पूर्ण तैयारियाँ की और कुछ ही दिनों मे वहाँ से चल दिये। पूर्ण वैभव, राजसी ठाट-बाट से दोनो की सवारी जा रही थी। साथ में वहुत से सैनिक, हाथी, घोड़े और अन्य आवश्यक सामान था। नगरवासी उन्हें वहुत दूर तक छोड़ने आये थे। चारो ओर दोनों राजाओ की जय-जयकार हो रही थी। दोनो राजा अपनी जन्मभूमि की ओर वढ़ते गये। सुखद यात्रा करते हुए मार्ग में कई स्थान पर पड़ाव करते वे कुछ दिनों की लगातार यात्रा के पश्चात् अपने गृह नगर कनकपुर पहुँचे।

कनकपुर नगर के वाहर ही दोनो भाइयों ने विश्राम किया। यहाँ पहुँचकर उन्हें एक असीम आनन्द का अनुभव हुआ। उन्हे देख सारे नगर में हलचल मच गयी और यह खवर फैल गयी कि दो चक्रवर्ती और वलवान राजा आये हैं। सम्पूर्ण प्रजा चिन्तित हो गयी कि अव ये राजा कनकपुर पर निश्चय ही आक्रमण करेगे। देखते ही देखते यह समाचार राजा वीरधवल के पास भी पहुँचा। सुनकर वीरधवल भी कुछ विचलित हो उठे। उन्होने तत्काल

मन्त्री सुमतिचन्द्र को बुलवाया। मन्त्री सुमतिचन्द्र के आने के पश्चात राजा ने कहा—

"महामन्त्री !"

"जी महाराज !"

"एक बहुत ही बड़ी खबर है।"

"वह क्या महाराज !"

"तुमने सुना, हमारे नगर के बाहर दो सशक्त राजा सेना सहित आकर ठहरे हुए है।"

"हाँ महाराज ! यह तो मुझे भी पता चला है कि वे राजा हमारे नगर के पास ही ठहरे है किन्तु उनका उद्देश्य क्या है, यह नही पता चल सका।"

"उनका यहाँ आने का क्या प्रयोजन हो सकता है ? शायद वे हमसे युद्ध करने हेतु ही आये होंगे।"

सुनकर मन्त्री सुमतिचन्द्र ने कहा—

"क्या आपके पास उन्होने अभी तक कोई सन्देश नही भेजा ?"

"नही मुझे तो उनके आने का समाचार अनुचर के द्वारा ही ज्ञात हुआ।"

"महाराज ! क्या उनके पास सेना भी है ?"

"यह तो मुझे नही मालूम हो सका। किन्तु सोचता हूँ कि अब क्या होगा ? मन्त्रीवर ! हम अब वृद्ध हो चुके है। हम में वह शक्ति भी नही रही कि हम शत्रुओ का सामना कर सकें। हमारी सेना भी अब कमजोर ही

है। अब क्या होगा ? अगर ये दोनों राजा हमारे ऊपर आक्रमण करते है तो बहुत ही कष्टप्रद बात होगी। भारी तोड़-फोड़ होगी। हजारो व्यक्तियो की जान जायेगी। हमें अब क्या करना चाहिए ? हमारी तो कुछ भी समझ में नही आ रहा है।"

इतना कहकर राजा वीरधवल चिन्तित मुद्रा में बैठ गये। राजा को चिन्तित देखकर मन्त्री सुमतिचन्द्र ने कहा—

"महाराज ! चिन्ता करने से और घबराने से कुछ भी नहीं होगा।"

"तब हमें क्या करना चाहिए ?"

"महाराज ! हमें जानना चाहिए कि वे कौन है एवं कहाँ के राजा है तथा यहाँ किस प्रयोजन हेतु आये है ?

"ठीक है, उनकी ओर से कोई संदेश आवे, उसके पहले तुम्हीं वहाँ जाओ और पता लगाओ कि वे क्या चाहते है और उनके यहाँ आने का क्या कारण है ?"

"जी महाराज ! मैं अविलम्ब जाकर वास्तविकता जानने का प्रयत्न करता हूँ।"

इतना कहकर मन्त्री सुमतिचन्द्र वहाँ से चला गया और राजा वीरधवल चिन्तित हो, वही बैठ गये।

मन्त्री सुमतिचन्द्र नवागन्तुक राजा के डेरे तक पहुँचा और प्रहरी द्वारा संदेश भिजवाया कि कनकपुर राज्य के महामन्त्री सुमतिचन्द्र आपसे भेंट हेतु आये है। यह सन्देश

जब दोनों भाइयो को प्राप्त हुआ तो वे बडे प्रसन्न हुए। उन्होने मन्त्री सुमतिचन्द्र को सादर अन्दर भेजने को कहा। मन्त्री सुमतिचन्द्र जब अन्दर पहुँचे तो दोनो भाइयो ने उठकर उन्हें प्रणाम किया। मन्त्री सुमतिचन्द्र ने उन्हें ध्यानपूर्वक देखा और प्रसन्नतावश अचानक उनके मुँह से निकला—

"वीरभान ! उदयभान !"

वीरभान ने प्रसन्न हो कहा—

"आपने हमें पहचान लिया ?"

सुमतिचन्द्र ने प्रसन्न हो केवल अपना सिर स्वीकृति मे हिलाया। तब उदयभान ने कहा—

"आश्चर्य है कि इतने लम्बे समय के पश्चात भी आपने हमें पहचाना। हम वही वीरभान और उदयभान है जो काफी समय पूर्व आपसे बिछुड़ गये थे।"

फिर क्या था ? मन्त्री सुमतिचन्द्र ने उन्हें गले से लगा लिया जैसे एक पिता अपने वर्षों पश्चात् आये पुत्रों को लगाता है। अब तीनो की आँखो से आँसू बह निकले, जो हर्ष के थे। वीरभान और उदयभान ने तब अपनी बीती सारी घटना उन्हें बतला दी। मन्त्री सुमतिचन्द्र बैठे-बैठे बडे ध्यान से सारी बाते सुन रहा था। सुनकर उन्हे दुःख भी हुआ और खुशी भी। खुशी इस बात की थी कि वे सकुशल वापस आ गये है। तब वह बोला—

"चलो, ठीक ही हुआ। तुम अपने भाग्योदय के कारण पुनः पिताश्री के पास आ गये, यह बडी ही प्रसन्नता की बात है।

उदयभान ने पूछा—

"हमारे पिताश्री कैसे है ?"

"बेटा ! वे तो अब काफी थक गये हैं और कमजोर हो गये है। उन्हें तो अब सहारे की आवश्यकता है। ठीक ही हुआ कि तुम दोनों समय पर आ गये हो। यह खबर पाकर वे तो वहुत ही प्रसन्न होंगे। मैं अभी जाता हूँ और यह शुभ सन्देश सुनाता हूँ।"

प्रसन्न हो मन्त्री सुमतिचन्द्र वहाँ से चल दिया। मार्ग में वह उत्साहपूर्वक सभी नगरवासियो को यह शुभ सन्देश सुनाता जा रहा था। कितनी विचित्र बात है कि एक दिन यही मन्त्री सुमतिचन्द्र राजकुमारों के सिर लिये राजमहल जा रहा था, जो भी देखता वही घृणा करता, इसे दुष्ट और पापी समझता और आज यही मन्त्री सुमतिचन्द्र उन्ही राजकुमारों के जीवित होने और वापस आने का सन्देश सुनाता चला जा रहा था। यही तो समय का परिवर्तन है, और समय की मार से कौन वच पाया है।

देखते ही देखते यह शुभ समाचार सारे नगरवासियो में फैल गया। अव प्रजा की खुशी का ठिकाना ही न रहा। उनका तो भाग्य ही खुल गया। यह उनके लिए एक अनहोनी घटना थी। वे राजकुमार जो राजा और मन्त्री द्वारा मार दिये गये थे, षड्यन्त्र रच उन्हें काल-कवलित होने पर विवश कर दिया था, जिन राजकुमारों का नाम निशान तक मिट गया था और इस घटना को व्यतीत हुए काफी समय गुजर गया था वे ही राजकुमार

जीवित है और वापस अपने गृहनगर आये है यह आश्चर्य-पूर्ण बात थी। सारे नगरवासी दोनो राजकुमारो को देखने हेतु लगभग दौड़ते से चल दिये। दोनो राजकुमारो की जय-जयकार करते हुए वे उत्साह और उमंग मे वहाँ पहुँच रहे थे।

मन्त्री सुमतिचन्द्र जब राजा वीरधवल के समीप पहुँचा तो उसने कहा—

"महाराज को बधाई हो!"

महाराज ने देखा मन्त्री सुमतिचन्द्र के मुख पर प्रसन्नता छाई हुई है। उसकी साँसे तेज चल रही है, वह हाँफ रहा था, तब राजा ने पूछा—

"क्या बात है मन्त्रीवर!"

"महाराज शुभ सन्देश है।"

"वह क्या?"

"नगर के बाहर जो राजा आकर ठहरे है वे कोई और नही आपकी आँखों के तारे आपके कुंवर वीरभान और उदयभान ही है।"

"क्या कहा? महामन्त्री! एक बार फिर से कहो।"

"सच महाराज! वे राजकुमार वीरभान उदयभान ही है।"

राजा प्रसन्नतावश, खुशी में काँपते हुए वही बैठ गये। उनके मुँह से बोल ही नही निकल रहा था। उनकी

समझ में नहीं आ रहा था कि यह कहाँ तक सत्य है। वे बोले—

"अहो ! यह तो महान आश्चर्य है।"

"हाँ महाराज ! दोनो भाई वर्षों बाद यहाँ सकुशल पहुँचे हैं।"

तब अत्यधिक प्रसन्न हो राजा ने कहा—

"मन्त्रीवर ! जाओ और नगर में घोषणा कर दो कि खुशियाँ मनाई जायें। दीपक जलाये जाये। घर-घर को और सारे नगर को सजाया जाये। और हाँ, दोनो राजकुमारों को यहाँ राजमहल तक लाने के सारे प्रबन्ध तुम शीघ्रातिशीघ्र करो।"

"जैसी आज्ञा महाराज की।"

मन्त्री सुमतिचन्द्र वहाँ से चला गया। देखते ही देखते राजाज्ञा का पालन होने लगा। सभी घर और द्वार, नगर को सजा दिया गया। चारों ओर खुशियों की बहार छा गयी। एक नई उमंग, एक नये उत्साह से प्रजा झूम उठी। राजा, मन्त्री, सामन्त और प्रजा हजारो नर-नारी बाजे-गाजे के साथ राजकुमारों के पास पहुँचे। राजकुमारों ने अपने पिताश्री को आते हुए देखा तो दौड़ पड़े ? समीप जाकर उनके चरणो मे गिर पड़े। दोनो भाइयो वीरभान एवं उदयभान को भावावेश में रोना आ गया। तब राजा वीरधवल ने उन्हें पकड़कर स्नेहपूर्वक उठाया और उनके सिर पर हाथ रखा। राजा वीरधवल की आँखों में भी आँसू आ गये थे। राजा वीरधवल ने उन्हें अपने गले लगा लिया। कोई कुछ नही बोला। चारो ओर सन्नाटा ! सभी

की आँखो में पानी भर आया था। आँसू बह रहे थे। पिता अपने पुत्र और पुत्र अपने पिता की ओर भीगी आँखों से देख रहे थे। मुँह से बोल नही निकल रहा था। तीनो खामोश थे किन्तु आँखो से मानो सब-कुछ कह रहे हो, आँसू मानो सारी व्यथा कथा कह रहे हों।

तीनों के मधुर मिलाप के पश्चात पिता अपने पुत्रो को ले नगर में पहुँचे। मंगल-प्रवेश हेतु सैंकडो नर-नारियो ने उनका प्रेमपूर्वक स्वागत किया। वे अपने राजकुमारों को पाकर प्रसन्न हुए। चारो ओर उनकी जय-जयकार होने लगी। राजा वीरधवल अपने पुत्रों को लेकर राजमहल पहुँचे। इस खुशी के अवसर पर राजा वीरधवल ने दान हेतु राजकोष के द्वार खोल दिये। वन्दियो को मुक्त कर दिया गया। कई अपराधियों को अभयदान दे दिया गया। चारों ओर खुशियाँ मनाई जाने लगी। सारे राज्य मे खुशी के दीपक जलाये गये।

राजा वीरधवल, वीरभान एवं उदयभान तीनों बैठे वार्तालाप कर रहे थे। वीरभान ने अपनी सारी व्यथा-कथा पिताश्री को बतलाई। उदयभान ने भी अपने जीवन में घटी घटनाओ का वर्णन किया। तब राजा वीरधवल अपने किये पर बहुत ही लज्जित हुए। उन्होने अपने पुत्रो से कहा—

"मुझसे बडी भूल हुई जो मैंने तुम्हें अपराधी समझा। मैं अपने किये पर बहुत ही दुःखी हूँ, मुझे क्षमा कर दो।"

तब वीरभान ने अपने पिता के हाथ स्नेहपूर्वक अपने हाथ में लेकर कहा—

"नही, नही; पिताजी ! ऐसा न कहें। आप तो निमित्त मात्र थे। यह सब तो हमें भुगतना ही था।"

"किन्तु मेरे ही कारण तुम दोनो को अपार कष्ट हुए। उस पापिन और कुल कलंकिनी के मोहवश मैं सब कुछ भूल बैठा। अपराधिनी तो वह थी और मैंने तुम्हे अपराधी समझ लिया। बेटा ! तुम दोनों तो मेरे लिए रत्न हो जिन्हें मैं अज्ञानता में आकर पत्थर समझ बैठा। अहो·······मैंने क्या किया ! अपना विवेक खो बैठा और भयंकर भूल कर बैठा। बेटा ! भूल मनुष्य से ही होती है और यदि कोई भूल नही करे तो वह भगवान ही है।"

तब उदयभान ने कहा—

"पिताजी ! हम तो अपने कर्मफल के कारण ही अब तक अपना घर छोड़, अपना परिवार छोड़ यहाँ-वहाँ भटकते रहे, सुख और दुःख झेलते रहे किन्तु जो भी हुआ ठीक ही हुआ। यह तो जीवन की कसौटी थी, नहीं तो हमें दुःख का पता कैसे चलता ? अब हमारे अहोभाग्य जो कि हम आपके पास आपकी सेवा में पहुँच गये है।"

राजकुमारों के उच्च विचार और मधुर वचन सुन राजा वीरधवल धन्य हो गये।

अब राजा वीरधवल ने निश्चय किया कि मेरे दोनों पुत्र राज्य का संचालन करने में निपुण हो गये है और मैं काफी थक चुका हूँ अतः राजकाज से मुक्त हो राजकुमारो

को राजतिलक कर दिया जाये। अतः राजा वीरधवल ने शुभ मुहूर्त निकलवा कर वीरभान तथा उदयभान का राजतिलक कर दिया। सूर्य एवं चन्द्र के समान दोनों भाइयो की जोडी जिसे देख-देख प्रजा उनकी जय-जयकार कर रही थी। कनकपुर की प्रजा वीरभान और उदयभान को राजा के रूप में देख बहुत ही प्रसन्न थी।

राजा वीरभान तथा राजा उदयभान ने कुछ ही दिनों पश्चात अपनी-अपनी रानी को कनकपुर मे बुलवा लिया। दोनो रानियों ने अपने ससुर के चरणो में झक शुभाशीर्वाद प्राप्त किया।

राजा वीरधवल जब राजकाज से मुक्त हो गये तो उन्होंने मन्त्री सुमतिचन्द्र को अपने पास बुलाकर कहा—

"मन्त्रीवर! मैं अब चाहता हूँ कि अपने आत्म-कल्याण हेतु संयम ग्रहण कर लूँ।"

"अहो.......यह तो उत्तम विचार है। मैं भी अब काफी थक गया हूँ और मैंने भी यही विचार किया कि इस सांसारिक क्रियाओ से हटकर और संयम का मार्ग अपनाकर अपना कल्याण करूँ।"

उपरोक्त विचार कर राजा वीरधवल एवं मन्त्री सुमतिचन्द्र ने दीक्षा लेने का निर्णय कर लिया। दोनो ने अपने परिवार के सदस्यो के समक्ष संयम लेने सम्बन्धी अपने विचार रखे जिनका समर्थन इनके परिवार के सदस्यों ने किया और याचको को मनोवांछित दान दक्षिणा देकर वहाँ विराजित प्रख्यात, सुविख्यात, विद्वान, संयमी, आचार्य

धर्मकीर्ति की सेवा में पहुँचकर अपनी संयम लेने की अभिलाषा प्रकट की। आचार्यश्री ने दोनों के संकल्प की सराहना करते हुए समारोहपूर्वक दोनो को दीक्षा प्रदान कर दी। अब वे मुनि वीरधवल तथा मुनि सुमतिचन्द्र हो गये। एक मास पश्चात जैनाचार्यश्री ने नवदीक्षित मुनियो के साथ कनकपुर से विहार कर दिया। तब कनकपुर से राजा वीरभान, राजा उदयभान तथा कई नागरिक गण कुछ दूर तक उनके साथ गये और श्रद्धा एवं भक्ति पूर्वक उन्हें विदा दी।

जैनाचार्य मुनि धर्मकीर्ति एवं नवदीक्षित मुनियो ने गाँव-गाँव तथा नगर-नगर में जाकर ज्ञान की ज्योति जगाई। कई व्यक्तियों को सत्य और अहिंसा का बोध करवाया। पाप, छल, कपट, मिथ्याचार को दूर किया। जहाँ भी ये पधारते वहीं विशाल जन समूह उमड़ पड़ता और इनके दर्शन तथा व्याख्यानो का लाभ लेता। इस तरह मुनियो ने कई व्यक्तियों को ज्ञान का मार्ग बतलाया। कई व्यक्तियो ने श्रावक धर्म को धारण किया तथा कइयों ने इनसे दीक्षा ग्रहण की।

इसी तरह कुछ मास व्यतीत होने के उपरान्त मुनि श्री वीरधवल पुनः कनकपुर पधारे। खबर सुन दोनों राजा वीरभान एवं उदयभान तथा प्रजा दौड़े आये। मुनि वीरधवल का खूब आदर सत्कार किया। मुनि श्री वीरधवल कुछ दिनो वहीं रहे। नित्य व्याख्यान, तत्व चर्चा का कार्य चलता रहा। मुनि श्री के पधारने पर जन-जन

मे एक नया उल्लास जग गया था। धर्म के प्रति आस्था और प्रबल हो गई थी। धार्मिक स्थल पर भीड़ इकट्ठी हो जाती थी। बच्चे, वृद्ध, स्त्री-पुरुष सभी धार्मिक क्रियाओं में जुट गये। सभी व्यक्ति एक पवित्र भाव लिये धार्मिक क्रियाओ का पालन करने लगे। मुनिश्री के व्याख्यान नित्य प्रति सुवह और शाम को होने लगे। समस्त उपस्थित विशाल जन समूह एकाग्रता से उनके वचनामृत को श्रवण करते। उनके अच्छे उदाहरण एवं दृष्टान्तो को सुन नागरिक भी अच्छी बातो को अपने आचरण मे उतारने लगे। अधिकाश व्यक्ति मुनि श्री वीरधवल के व्याख्यानो को सुन धार्मिक भावना से ओत-प्रोत हो गये। राजा वीरभान एवं उदयभान ने मुनि श्री वीरधवल के अमृत वचनो को सुन श्रावक धर्म को धारण किया और साथ ही दोनो राजाओ की रानियों ने भी इनका अनुसरण किया। अब वे चारो ही श्रावक वन गये थे।

मुनि श्री वीरधवल ने अपने अन्तिम समय में धर्म की आराधना कर, धर्म की शरण ग्रहण कर अपना आत्म-कल्याण किया और संथारा कर मोक्ष प्राप्त किया। राजा वीरभान तथा राजा उदयभान एव रानियो ने श्रावक धर्म का पालन करते हुए एवं सम्यक् रीति से व्रतो का पालन करते हुए अपने जीवन का शेष समय व्यतीत किया और अन्तिम समय में कालधर्म प्राप्त कर वैमानिक देव वने।



बदलती हवाएँ : अभिमत

नारी शक्ति का अप्रतिम पुञ्ज है। शक्ति के साथ जब सुकुमारता और मृदुलता संश्लिष्ट हो जाती है तो शक्ति सुखद बन जाती है, भीतिप्रद नही रहती। नारी में शक्ति के साथ-साथ ये दोनों विशेषताएँ और होती है, इसीलिए तो उसे इस वसुन्धरा का रत्न कहा गया है।

शक्ति जब सन्निर्माण की दिशा अपना लेती है तो वह ऐसे अनेक रचनात्मक उत्तमोत्तम कार्य कर जाती है, जिनसे मानवता का मुख उज्ज्वल होता है। घर में, परिवार में, समाज में नवचेतनामय वातावरण सर्जित होता है। यदि शक्ति ध्वंसोन्मुखी बन जाती है तो वह विनाश का कहर ढहा देती है, जो अवांछित है, अप्रीतिकर है।

'बदलती हवाएँ' युवाकवि तथा लेखक मुनिश्री विनय कुमार जी 'भीम' की एक ऐसी औपन्यासिक कृति है, जिसमें उन्होने नारी के सर्जनशील, साहसशील और सौमनस्य-शील रूप का एक अन्तर्विमोहक कथानक के आधार पर मार्मिक अंकन किया है।

प्रस्तुत उपन्यास में चित्रित जसुमती एक ऐसा आदर्श नारी पात्र है, जो यथार्थोन्मुखी जीवन-धारा में प्रवहमान रहने मे किसी भी बाधा की पर्वाह नही करता। वाग्दान द्वारा स्वीकृत सुयोग्य, सच्चरित्र युवक सुनन्द, जिसे वह

अन्तर्मन से पति रूप में वर लेती है, को पिता और भाई के अस्वीकार एवं विरोध के बावजूद अस्वीकार नही करती, जब वह रत्नो की चोरी और नुकसान के कारण नगर सेठ के पुत्र के स्थान पर एक दरिद्र श्रमिक हो जाता है। वह उसकी सहधर्मिणी बन जाती है।

जसुमती का ओज जाग उठता है और वह अपने पति सुनन्द के साथ जीवन के नवसर्जन और विकास में जुट जाती है। श्रम, धैर्य, साहस, बुद्धि और सूझ-बूझ द्वारा जसुमती भाग्य को पलट देती है। सुनन्द का दारिद्र्य चला जाता है, पुनः सुख-समृद्धि प्राप्त हो जाती है।

मूल कथानक को बल प्रदान करने वाले, अनेक रोचक घटनाक्रमो से संपल्लवित यह उपन्यास इतना मोहक बन पडा है कि एक बार पढने को हाथ में लेने पर उसे छोडने का मन नही होता।

मुनिश्री विनयकुमार जो 'भीम' की अभिव्यंजना शैली की अपनी यह विशेषता है, वह तत्क्षण पाठक के अन्तर्-तम का संस्पर्श करती है और उस पर अपनी छाप अकित कर देती है। मुनिश्री लोक-प्रचलित सरल शब्दावलो के प्रयोग द्वारा छोटे-छोटे स्फूर्त वाक्यो के माध्यम से पाठक को रचना के मूल लक्ष्य तक इस प्रकार साथ लिये चलते हैं कि पाठक जरा भी परिश्रान्ति अनुभूत किये बिना खुशी-खुशी आगे बढ़ता जाता है।

साहित्य मानव-जाति के कल्याण तथा श्रेयस् का हेतु माना जाता है, पर यह मान्यता सिद्ध तब होती है, जब

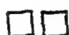
साहित्य केवल मनोविलास के लिए न होकर मानस के परिष्कार, अभ्युत्थान तथा सुसंस्कार के लिए हो। मुनिश्री की प्रस्तुत कृति इसी कोटि में आती है।

आज के युग में, जब सामाजिक शृंखलाएँ तड़ातड़ टूटती जा रही हैं, सुसंस्कारमय मर्यादाएँ विलुप्त हो रही हैं, उद्दाम वासना, भौतिक सुख और उनकी पूर्ति के हेतु अर्थ पर ही मानव की जहां आंख लगी है, उसे पुनः धार्मिक चिन्तन की ओर मोड़ने के निमित्त, वासनोन्मुखी वृत्ति के स्थान पर आत्मोन्मुखी वृत्ति की ओर लाने हेतु इस प्रकार के साहित्य की बहुत बड़ी उपयोगिता है, जिसकी आवश्यकता है। मुनिश्री विनयकुमार जी 'भीम' ने '[illegible] कथाएँ' की रचना कर लोककल्याण का बहुत ही उत्तम कार्य किया है। वे शत-शत वर्धापनीय हैं।

प्रस्तुतीकरण की सुरुचिमयता, भाषा की सादगी तथा भावों की लोकजनीनता और दैनन्दिनी उपयोगिता के कारण यह उपन्यास सर्वजनग्राह्य होगा, ऐसा मेरा विश्वास है। मुनिश्री, मुझे आशा है, इसी प्रकार की लोककल्याणकारी कृतियों से माँ भारती के भण्डार को भरते रहेंगे।

—डॉ० [illegible] शास्त्री
एम० ए० (त्रय) [illegible] आचार्य,
पी-एच० डी०, [illegible]
भू० पू० प्रवक्ता—प्राकृत जैन शोध संस्थान
वैशाली (बिहार)

बदलती हवायें (उपन्यास)—लेखक—**मुनिश्री विनयकुमार 'भीम'**, संपादक—**श्री श्रीचन्द सुराना 'सरस'**, प्रकाशक—**मुनिश्री हजारीमल स्मृति प्रकाशन, पीपलिया बाजार, ब्यावर (राज०)** मूल्य—५ रु० । मुनिश्री विनयकुमारजी 'भीम' का यह उपन्यास नारी के सुसंस्कार, साहस और संघर्ष की सुन्दर गाथा है। जीवन के कठिन क्षणो मे अपने साहस और सूझबूझ से प्रतिकूलता को अनुकूलता मे बदल देने वाली उपन्यास की नायिका जसुमति आज की युवा पीढी के लिए एक आदर्श है। मुनिश्री 'भीम' ने अब तक छोटी बड़ी १५ पुस्तके लिखी है और यह उपन्यास अपनी कथावस्तु के साथ-साथ भाषा-शैली के कौशल से रोचक बना है। उपन्यास का शीर्षक 'बदलती हवाएँ' इस माने मे सार्थक है कि हमे हवा के रुख को देखते हुए संतुलित रहना चाहिए। उपन्यास मे धर्म और जीवन को एकांगी दृष्टि से न देखते हुए धर्ममय जीवन की सुन्दर व्याख्या की गई है। लगभग १५० पृष्ठो का यह उपन्यास बाजारु उपन्यासो की भीड मे तूफानो के बीच अंधेरी रात मे आलोक बिखेरने वाला एक नन्हा-सा दीपक है। (जैन जगत, फरवरी १९८३)



उपन्यासकार : मुनि विनयकुमार 'भीम', प्रकाशक मुनि श्री हजारीमल स्मृति प्रकाशन ब्यावर (राजस्थान) पृष्ठ १३७। मूल्य पांच रुपये।

अपनी बात मे लेखक ने आक्रोश प्रकट किया है कि आज उपन्यास के नाम पर प्रेम (इश्क), रोमांस, मारधाड, जासूसी-हिंसा और तस्करी के दिल दहलाने वाले कारनामे है। क्या इन सब तत्वो के समावेश के बिना उपन्यास नही लिखा जा सकता ? (उत्तर मे) लेखक ने बिलकुल साफ सुथरे परिवेश मे एक नारी चरित्र को विशिष्टता देते हुए इस उपन्यास की रचना की है।....

सद्साहित्य की दिशा मे उपन्यास स्वागत योग्य है।

—नरेश गुप्त 'नीरस'

(कथालोक : अप्रेल १९८३)

नवीन शैली में आगम-साहित्य

(श्री व० स्था० जैन श्रमण संघ के युवाचार्य श्री मधुकर मुनिजी की प्रधान सम्पादकता में आयोजित/प्रकाशित)

आचारांग सूत्र	२५)	ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र	४५)
आचारांग सूत्र	३०)	उवासगदसाओ	२५)
सूत्रकृतांग सूत्र	४५)	अन्तकृद्दशा सूत्र	२५)
सूत्रकृतांग सूत्र	२५)	अनुत्तरोपपातिकदशा सूत्र	१६)
स्थानांग सूत्र	५०)	विपाक सूत्र	२५)
समवायांग सूत्र	२५)	नन्दीसूत्र	२८)
भगवती सूत्र		औपपातिक सूत्र	२५)
(प्रथम खंड)	५०)	राजप्रश्नीय सूत्र	३०)
		प्रज्ञापना सूत्र (प्रथम खंड)	५०)

।। जैन योग ग्रन्थ चतुष्टय ।।

आचार्य श्री हरिभद्रसूरि रचित :

- ☐ योगदृष्टि-समुच्चय
- ☐ योगविंशिका
- ☐ योगबिन्दु
- ☐ योगशतक

- ☐ संप्रेरणा—युवाचार्य श्री मधुकर मुनि
- ☐ संयोजन—महासती श्री उमरावकुंवर जी 'अर्चना'
- ☐ संपादन—डा० छगनलाल शास्त्री एम. ए, पी-एच. डी
- ☐ मूल्य : बारह रुपया